• फर्जी पा रहे किसान सम्मान निधि • मप्र में नहीं रुकी बच्चों की तस्करी

पाक्षिक
अक्स
In Pursuit of Truth
www.akshnews.com

कोरोना पर भारी वोटों की मारामारी

वर्ष 19, अंक-3 1 से 15 नवंबर 2020 पृष्ठ-48 मूल्य 25 रूपये

R.N.I. NO.HIN/2002/8718 M.P. BPL/642/2018-20

उपचुनाव दांव पर 'राज'

कई मंत्रियों पर मंडरा रहा हार का खतरा

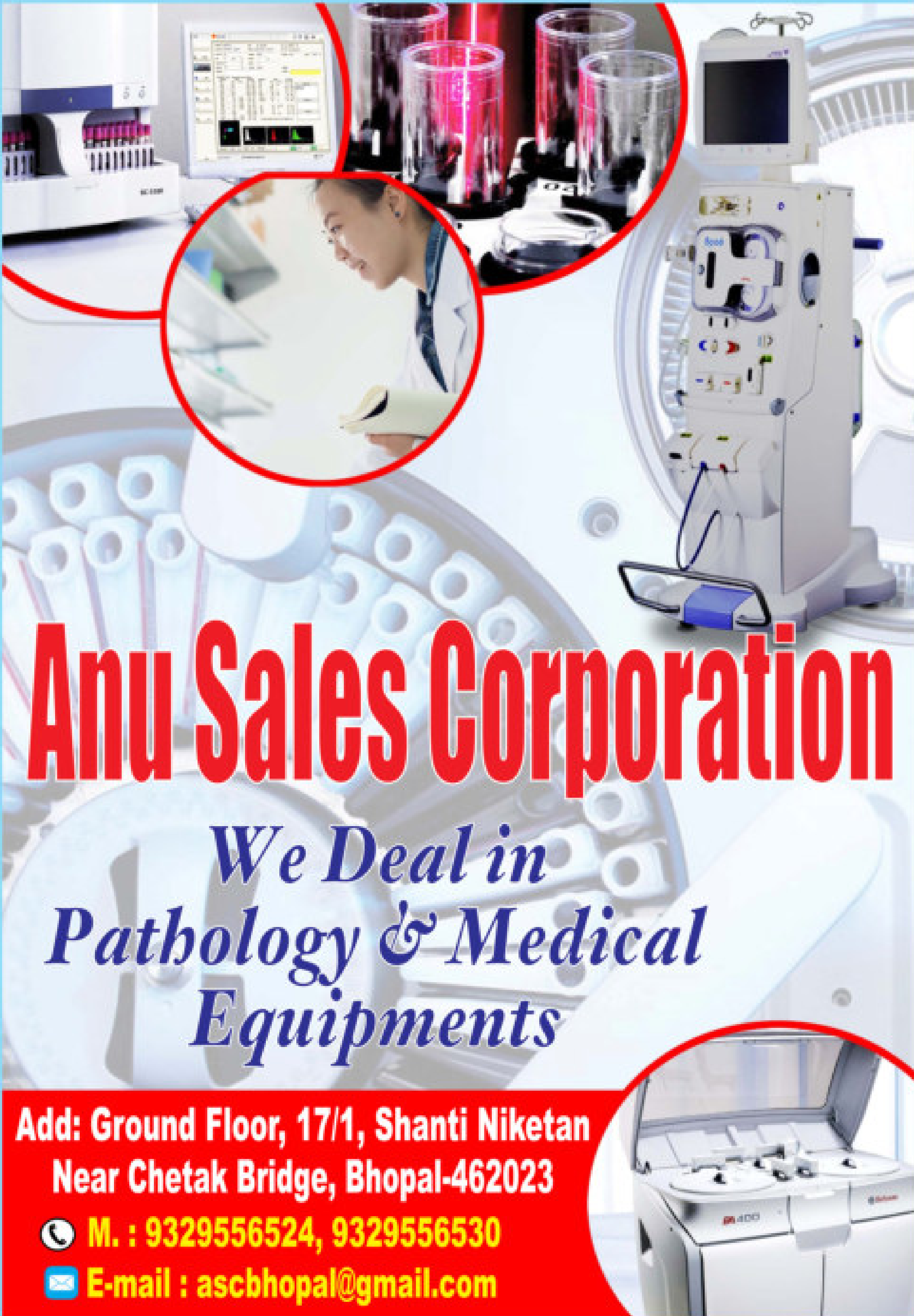
Anu Sales Corporation
We Deal in
Pathology & Medical
Equipments
Add: Ground Floor, 17/1, Shanti Niketan
Near Chetak Bridge, Bhopal-462023
M. : 9329556524, 9329556530
E-mail : ascbhopal@gmail.com

इस अंक में

आर्थिकी

9 | कर्ज का बढ़ता मर्ज

बड़े बुजुर्ग हमेशा से कहते आए हैं कि कर्ज लेकर घी पीने की आदत ठीक नहीं। जितनी चादर हो उतने पैर पसारने चाहिए, वक्त-बेवक्त के लिए हमेशा थोड़ी पूंजी बचाकर रखो। अनुभवों के आधार पर बड़ों की इन नसीहतों से...

राजपथ

10-11 | राजनीतिक भविष्य का उपचुनाव

देश में पहली बार किसी एक राज्य की 28 सीटों पर एकसाथ चुनाव हो रहे हैं और इन उपचुनावों की जीत-हार दोनों पार्टियों का भविष्य वैसे ही तय करेगी जैसे आम चुनाव करते हैं। ऐसा पहली बार हो रहा है, जब भाजपा...

भर्राशाही

13 | ये नशा नहीं जहर है

धार्मिक नगरी उज्जैन में शराब के नाम पर जहरीला पेय पदार्थ (जहरीली शराब) पीने से 16 लोगों की मौत के बाद मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने नशे का अवैध कारोबार करने वालों के खिलाफ सख्त कदम उठाने का निर्देश दिया है।

विकास

15 | जमीनों का कारोबार

अभी तक एकेवीएन अपने स्तर पर ही जमीनों के आवंटन से लेकर विकास कार्यों और अन्य महत्वपूर्ण निर्णय खुद कर लेता था, लेकिन एक साल पहले एकेवीएन का मर्जर एमपीआईडीसी यानी मध्यप्रदेश औद्योगिक विकास निगम में कर दिया गया, उसके बाद से ही सारी फाइलें...

आवरण कथा 24, 25, 26, 27, 28

मप्र में 28 विधानसभा सीटों पर उपचुनाव कोई छोटा-मोटा उपचुनाव नहीं है बल्कि यह लिखेगा विधानसभा में सरकार की तकदीर। यह है सत्ता की असली लड़ाई। 230 सदस्यीय विधानसभा में सरकार बचाए रखने के लिए भाजपा को चाहिए 9 सीट जबकि सत्ता में वापसी के लिए कांग्रेस को जीतनी होंगी सभी 28 सीटें। यही नहीं इस उपचुनाव में शिवराज सिंह चौहान, ज्योतिरादित्य सिंधिया, कमलनाथ और दिग्विजय सिंह का राजनीतिक भविष्य भी दांव पर है।

32-33

36

39

45

राजनीति

30-31 | एनडीए की बलि

लालकृष्ण आडवाणी की भाजपा ने 1998 में 25 से ज्यादा सहयोगियों को मिलाकर राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) का गठन किया था और इसके साथ भारत में सबसे सफल गठबंधन की राजनीति की शुरुआत हुई थी। इसके बाद तीन ऐसे गठबंधनों ने पूरे कार्यकाल...

राजस्थान

35 | नए तूफान की आहट

राजस्थान में कांग्रेस की अंतर्कलह एक बार फिर कभी भी सतह पर आ सकती है। इस साल मई-जून में सचिन पायलट और राजस्थान के मुख्यमंत्री अशोक गहलोत के बीच हुआ मनमुटाव इस कदर दिक्कत दे गया कि मामला सुप्रीम कोर्ट तक चला गया। कांग्रेस की अंतरिम अध्यक्ष सोनिया गांधी...

उत्तरप्रदेश

37 | अपने ही काफी हैं!

पहले हाथरस गैंगरेप और अब बलिया गोलीकांड, उप्र के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ को लगातार अपनों की वजह से भी फजीहत हो रही है। वरना, गैरों में कहां दम नजर आ रहा था। राजनीतिक विरोधियों में फ्रंट पर कांग्रेस महासचिव प्रियंका गांधी...

6-7 अंदर की बात
41 महिला जगत
42 अध्यात्म
43 कहानी
44 खेल
45 फिल्म
46 व्यंग्य

अपनी बात

वे गंदा बोलते हैं क्योंकि हमें अच्छा लगता है...

अनवर सदीद का एक शेर है...

खुली जबान तो जर्फ उनका हो गया जाहिर
हजार भेद छुपा रक्खे थे खमोशी में

कुछ ऐसा ही हाल अपने माननीयों का है। झकाझक सफेद कपड़े में लिपटे माननीय सत्य, अहिंसा और संस्कार की मूरत लगते हैं। लेकिन हकीकत इससे जुदा होती है। चुनावी मौसम में माननीयों की हकीकत अपने आप सामने आ जाती है। इन दिनों मप्र में 28 विधानसभा सीटों पर उपचुनाव हो रहे हैं और हर दिन माननीयों के गंदे बोल प्रदेश की फिजा को दूषित कर रहे हैं। जिन क्षेत्रों में उपचुनाव हो रहा है, वहां समस्याओं की भरमार है, लेकिन उसकी चिंता न करके माननीय एक-दूसरे को घेरने के लिए बदजुबानी पर जोर दे रहे हैं। रैलियों के जरिए नेताओं की बदजुबानी के किस्सों पर भी खूब बहस चल रही है। वैसे बहस की कोई बहुत गुंजाइश बनती नहीं है। बनती तो तब कि जब समाज उसका सहभागी नहीं होता। मतदाताओं की शह पर ही माननीय अपनी जुबान से अपशब्द बोलने की हिम्मत जुटाते हैं। जब कोई नेता किसी दूसरे नेता को अपशब्द कहता है तो रैली या सभा में जमकर ताली बजती है। इससे नेताओं को लगता है कि जनता अपने भले की बात सुनने की बजाय बदजुबानी को पसंद कर रही है। इसलिए वे जैसी करनी तैसी भरनी की तर्ज पर भाषण देते हैं। जिस दिन मतदाता गंदी बात सुनना बंद कर दे, नेता अपनी बदजुबानी पर खुद ताला लगा देंगे। दरअसल, नेताओं को बदजुबानी के लिए इतना हौंसला मतदाता ही देते हैं। उदाहरणार्थ जब पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ अपनी ही सरकार में मंत्री रह चुकीं एक नेत्री को 'आइटम' बता रहे थे, तो खूब तालियां भी बजी थीं और सीटियां भी। समाज के अलग-अलग हिस्सों से जुटी भीड़ को कमलनाथ के इस 'आइटम' शब्द से खूब मजा मिला था। वहीं जब उक्त नेत्री ने अपनी सभा में कमलनाथ के परिवार की महिलाओं को 'आइटम' कहा तो भी तालियों और सीटियों की आवाज किसी भी सूरत में कमलनाथ की सभा में बजी तालियों और सीटियों से कम नहीं थी। अगर कमलनाथ के आइटम कहने पर ताली और सीटी नहीं बजती, तो उस नेत्री को अपनी सभा में कमलनाथ के परिवार की महिलाओं को आइटम बताने से पहले एक बार नहीं, 100 बार सोचना पड़ता। लेकिन तालियों और सीटियों ने तो सोचने की गुंजाइश ही खत्म कर दी थी। दरअसल, नेताओं ने मान लिया है कि वे कुछ भी बोलें, उन्हें कोई सियासी नुकसान नहीं होता। आज तक कोई ऐसा उदाहरण नहीं मिलता, जब किसी नेता का चुनाव उसकी बदजुबानी की वजह से पलट गया हो। उलटे उसे अपनी बदजुबानी के जरिए अपने समर्थकों का एक नया वर्ग तैयार करने में मदद मिलती है। जाहिर सी बात है कि अगर समाज को लगता है कि नेताओं की बदजुबानी रुकनी चाहिए तो फिर उन्हें अपनी मानसिकता भी बदलनी होगी। दरअसल, नेता जिन रैलियों और सभाओं में उटपटांग बाते करते हैं वे सभी प्रायोजित होती हैं। नेता क्या गलत बोल रहे हैं या क्या सही बोल रहे हैं, इसकी फिकर किसी को नहीं रहती है, बस उन्हें ताली और सीटी बजाने का काम दिया जाता है और वे वैसा ही करते हैं। अगर मतदाता अपने मन से किसी सभा में नेता को सुनने जाए तो वहां दिए जाने वाले भाषण में अगर कहीं कोई गलती होती है तो वह तत्काल रिएक्ट करता है। लेकिन जुटाई गई भीड़ इसलिए सबकुछ सुनती रहती है कि उसे उसी के लिए बुलाया जाता है। जिस दिन जनता गंदी बातें सुननी छोड़ दे उसी दिन से बदजुबानी बंद हो जाएगी।

-राजेन्द्र आगाल

पाक्षिक अक्स

वर्ष 19, अंक 3, पृष्ठ-48, 1 से 15 नवंबर, 2020

प्रकाशक एवं संपादक : राजेन्द्र आगाल

सम्पादकीय कार्यालय :
प्लाट नम्बर 150, जोन-1 मनोरमा कॉम्पलेक्स,
एफ-03, 04, प्रथम तल, एम.पी. नगर
भोपाल- 462011 (म.प्र.),
फोन नं. 0755-2557777, टेलीफेक्स - 0755-4017788
email : akshmagazine@gmail.com
W ebsite : www.akshnews.com
RNI NO. HIN/2002/8718 MPBPL/642/2018-20

ब्यूरो
मुंबई :- ऋतेन्द्र माथुर, **कोलकाता**:- इंद्रकुमार, **जयपुर**:- आर.के. बिन्नानी, **छत्तीसगढ़**:- संजय शुक्ला, मार्कण्डेय तिवारी, टी.पी. सिंह, **लखनऊ** :- मधु आलोक निगम।

प्रदेश संवाददाता
094251 25096 (इंदौर) विकास दुबे
098276 18400 (जबलपुर) धर्मेन्द्र कथूरिया
094259 85070, (उज्जैन) श्यामसिंह सिकरवार
094259 85070, (मंदसौर) धर्मवीर रत्नावत
098934 77156, (विदिशा) ज्योत्सना अनूप यादव

क्षेत्रीय कार्यालय
नई दिल्ली : ईसी 294 माया इंक्लेव मायापुरी-
फोन : 011 25495021, 011 25494676
मुंबई : बी-1, 41 शिव पावर्ती चेम्बर प्लाट नंबर 106-110 सेक्टर-21 नेरूल, नवी मुंबई-400706 मो.-093211 54411
कोलकाता : 70/2 हजरा रोड कोलकाता
फोन-033 24763787, मोबाइल: 09331 033446
जयपुर : सी-37, शांतिपथ, श्याम नगर (राजस्थान)
फोन- 0141 2295805, मोबाइल-09829 010331
रायपुर : एमआईजी 1 सेक्टर-3 शंकर नगर, फोन : 0771 2282517
भिलाई : नेहरू भवन के सामने, सुपेला, रामनगर, भिलाई, मोबाइल 094241 08015
इंदौर : 39 श्रुत्रि सिंलटर निपानिया, इंदौर
मोबाइल - 094251 25096

स्वात्वाधिकारी, मुद्रक व प्रकाशक, राजेन्द्र आगाल द्वारा आगाल प्रिंटर्स, प्लाट नं. 150, जोन-1, प्रथम तल, एफ-03, मनोरमा काम्पलेक्स, एम.पी. नगर भोपाल 462011 (म.प्र.), से मुद्रित एवं प्रकाशित

इस अंक में प्रकाशित सामग्री लेखकों के अपने विचार हैं इनसे सम्पादक का सहमत होना अनिवार्य नहीं हैं समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल होगा।

पत्र-संपादक के नाम

akshnews.com

किसके साथ हैं किसान?

प्रदेश में चुनाव का माहौल है। भाजपा और कांग्रेस के नेता चुनावी क्षेत्रों में किसानों को साधने में जुट गए हैं। दोनों दल के नेता एक-दूसरे पर आरोप लगाकर अपने आपको किसान हितैषी बताने में जुटे हुए हैं। अब किसान किसका साथ देते हैं ये तो वक्त ही बताएगा।

● **रामेश्वर वर्मा,** भोपाल (म.प्र.)

भविष्य होगा सुरक्षित

नीमच जिले में मादक पदार्थ तस्करी के मामले 2019 में सर्वाधिक सामने आए हैं। इनमें प्रभावी कार्रवाई करते हुए पुलिस ने आरोपियों को सलाखों के पीछे पहुंचाने का काम किया है। सरकार को इस मामले में और अधिक गंभीर होना पड़ेगा। तभी आने वाली पीढ़ी का भविष्य सुरक्षित हो सकेगा।

● **निदा खान,** इंदौर (म.प्र.)

प्रदूषण रोकने का प्रयास हो

सिंगरौली को मप्र की ऊर्जा राजधानी भी कहा जाता है। यहां कंपनियां प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के दिशा-निर्देशों को दरकिनार करते हुए कोयले का उपयोग करती हैं। इसके कारण यहां प्रदूषण है। और तो और सिंगरौली के पावर प्लांट्स में एफजीडी अभी पूरी तरह से एक्टिवेट नहीं हैं।

● **मोहन शर्मा,** सीधी (म.प्र.)

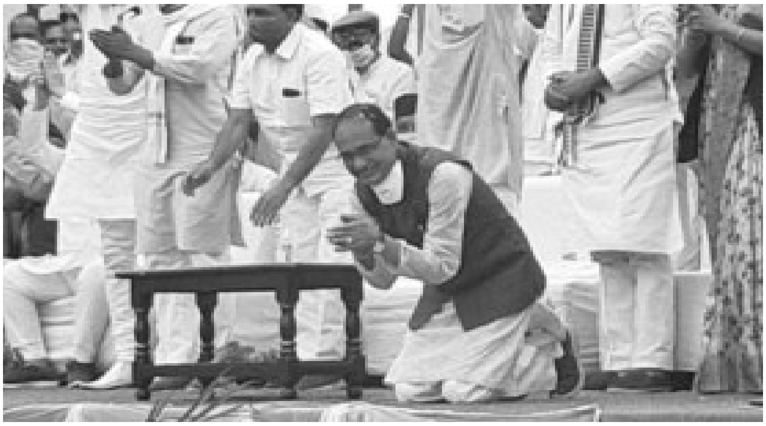

मतदाताओं को रिझाने में लगे नेता

मप्र के उपचुनाव में कांग्रेस की तरफ से एकमात्र बड़े चेहरे के रूप में कमलनाथ सक्रिय हैं। पूरा उपचुनाव उनके इर्द-गिर्द घूम रहा है। दिग्विजय सिंह तो चुनावी परिदृश्य में कहीं नजर ही नहीं आ रहे हैं। उधर, भाजपा में शिवराज सिंह चौहान मोर्चे पर आगे हैं। भाजपा शिवराज सिंह के चेहरे पर ही अधिक से अधिक सीटें जीत सकती है। उपचुनाव वाले क्षेत्रों में मतदाताओं को आकर्षित करने के लिए हर तरह के नाटक और नौटंकी देखने को मिल रही है। जो नेता कभी सर्वसुविधा कक्ष से बाहर नहीं आते थे, वे भीड़ में जाने से भी परहेज नहीं कर रहे हैं। राजनीतिक अस्तित्व के इस महासंग्राम में मतदाताओं को रिझाने के साथ ही एक-दूसरे को नीचा दिखाने की भरपूर कोशिश हो रही है।

● **भगवानदास,** ग्वालियर (म.प्र.)

वन्य जीवों की तस्करी पर रोक कब?

टाइगर स्टेट का तमगा मिलने के बाद प्रदेश में शुरू हुई 11 नए अभयारण्यों के गठन की प्रक्रिया पर पूर्ण विराम लग गया है। राज्य सरकार ने नए अभयारण्यों की जरूरत को सिरे से खारिज करते हुए इस प्रक्रिया को रोक दिया है। 8 साल के अथक प्रयास के बाद प्रदेश दोबारा टाइगर स्टेट बना है। मप्र के वनक्षेत्र पहले से ही असुरक्षित रहे हैं। यहां वनक्षेत्रों में वन्य जीवों की तस्करी निरंतर होती रहती है। प्रदेश के 10 नेशनल पार्क तथा 25 अभयारण्यों के आसपास स्थित ऐसे फार्म हाउस और रिसोर्ट तस्करों का अड्डा बने हुए हैं।

● **सुरेश सोनी,** राजगढ़ (म.प्र.)

पानी के लिए जुटीं महिलाएं

बुंदेलखंड में जल जोड़ो अभियान के अनुसार तालाब में सत्तर एकड़ तक पानी भर रहा है। भूजल स्तर में वृद्धि से सूखे कुएं भी जीवंत हुए हैं और हैंडपंप भी कम गहराई में पानी दे रहे हैं। पशु धन के लिए भी अब पानी का संकट नहीं रहा। अब खेती में समृद्धि की संभावनाएं हकीकत बन गई हैं। यह लक्ष्य हासिल करना सरल कार्य नहीं था। लेकिन क्षेत्र की महिलाएं तन-मन से साथ जुटीं और लक्ष्य हकीकत में बदल गया।

● **राकेश पुरोहित,** छतरपुर (म.प्र.)

पाठकों से निवेदन

कृपया अपनी प्रतिक्रियाएं पक्ष या विपक्ष जो भी संभव हो इस पते पर भेजें

अक्स

150 जोन-1, मनोरमा काम्पलेक्स,
एफ-02, 03, एमपी नगर, भोपाल

आधी हकीकत आधा फसाना

सत्ता के लिए नेता दल जरूर कपड़ों की तरह बदल रहे हैं पर जिसे जिस दल की रीति-नीति और संस्कृति की आदत पड़ जाए उसे दूसरे दल की रीति-नीति और संस्कृति आसानी से रास नहीं आती। दल के भीतर भी वफादार और समर्पित नेताओं व दलबदलू नेताओं के बीच गुटबाजी बनी ही रहती है। उत्तराखंड को ही ले लीजिए। त्रिवेंद्र सिंह रावत सरकार के आधे मंत्री कांग्रेसी अतीत वाले ठहरे। कई तो खुद को घर का रहा न घाट का जैसी स्थिति में देखते हैं। मसलन सूबे के श्रम मंत्री हरक सिंह रावत अब भवन और सन्निर्माण कर्मकार कल्याण बोर्ड के अध्यक्ष नहीं रहे। कारण मुख्यमंत्री ने इस बोर्ड का पुनर्गठन करा दिया। अब अध्यक्ष बन गए हैं शमशेर सिंह सत्याल। जो राज्य सलाहकार श्रम संविदा बोर्ड के भी अध्यक्ष ठहरे। हरक सिंह रावत के साथ-साथ बोर्ड की सचिव दमयंती को भी हटा दिया था सरकार ने। जो हरक सिंह रावत की खास मानी जाती हैं। पर वे किसी तरह अपनी कुर्सी बचाने में कामयाब हो गईं। यह बोर्ड बतौर श्रम मंत्री हरक सिंह रावत के विभाग में ही आता है। उन्हें पुनर्गठन की भनक तक नहीं लग पाई। मुख्यमंत्री से उनकी अरसे से पट नहीं पा रही। चर्चा तो यहां तक है कि मुख्यमंत्री उनका फोन भी नहीं उठाते। वैसे भाजपा के उत्तराखंड में ग्रह नक्षत्र ठीक नहीं चल रहे।

एक और झटका

राजग तो अब बस नाम भर के लिए बचा है। भाजपा के ज्यादातर सहयोगी दल पहले ही अलग हो चुके हैं। बिहार में ले देकर जद (एकी) से गठबंधन जरूर है। रामविलास पासवान के निधन के साथ ही फिलहाल तो केंद्र में भी कोई हिस्सेदारी बची नहीं लोजपा की। शिवसेना के बाद शिरोमणी अकाली दल ने भी नाता तोड़ लिया भाजपा से। ताजा संबंध विच्छेद गोरखा जनमुक्ति मोर्चे ने किया है। पश्चिम बंगाल के पर्वतीय इलाकों को अलग गोरखालैंड राज्य बनाए जाने के आंदोलन की देन है यह मोर्चा। पिछले 11 साल से भाजपा के साथ था। दार्जिलिंग लोकसभा सीट भाजपा को गोरखा जनमुक्ति मोर्चे के समर्थन की वजह से ही 2009 से मिल रही है। मोर्चे के नेता विमल

गुरुंग का अचानक मोह भंग हो गया भाजपा से। कोलकाता में बकायदा मीडिया से मुखातिब हुए और ऐलान कर दिया कि अगले साल विधानसभा चुनाव ममता बनर्जी की तृणमूल कांग्रेस के साथ मिलकर लड़ेंगे। जबकि कल तक ममता दीदी उनकी दुश्मन नंबर एक थी। तीन साल से फरार चल रहे थे तभी तो गुरुंग। भाजपा पर वादाखिलाफी का आरोप लगाया है। अलग राज्य तो दूर गोरखा जातियों को जनजाति का दर्जा देने तक का वादा पूरा नहीं किया।

नीतीश पर दोहरा वार

बिहार में महागठबंधन और राजग के बीच टक्कर कांटे की लग रही है। तेजस्वी यादव की सभाओं में भीड़ खूब जुट रही है। चिराग भी तेजस्वी की तरह नीतीश कुमार पर ही वार कर रहे हैं। नीतीश को बिहार में राज करते डेढ़ दशक हो गया है। लिहाजा लोगों में सत्ता विरोधी कुछ नाराजगी तो होगी ही। भाजपा के मुकाबले चिराग ने अपने उम्मीदवार नहीं उतारे हैं। वे खुद को नरेंद्र मोदी का हनुमान बताते हुए चुनाव बाद भाजपा-लोजपा की सरकार बनने का दावा कर रहे हैं। नीतीश को मुख्यमंत्री पद का उम्मीदवार भले घोषित कर दिया है भाजपा ने पर वोट उनके या उनके काम के आधार पर नहीं मांग रही। वोट प्रधानमंत्री के नाम पर मांग रहे हैं। नीतीश हवा के बदले रुख से अनजान हों यह कैसे हो सकता है। फीकी रैलियां देख निराशा चेहरे पर साफ झलकती है। लालू के समधी चंद्रिका राय को नीतीश ने अपनी पार्टी से उम्मीदवार बनाया है। उनके प्रचार में पहुंचे तो भीड़ ने लालू यादव जिंदाबाद का नारा लगा दिया। नीतीश गुस्से से तमतमा गए और नारा लगाने वालों को हड़काया- तुम क्या अनाप-शनाप बोल रहे हो। यहां ये सब हल्ला मत करो। तुमको अगर वोट नहीं देना है तो मत दो।

ग्लैमर का आसरा

खुशबू सुंदर अब भाजपा में शामिल हो गई हैं। उसी भाजपा में जिसके नेता कल तक दक्षिण भारतीय फिल्मों की मशहूर अभिनेत्री को उनके वास्तविक नाम नखत खान से बुलाते थे। खुशबू ने 200 से ज्यादा फिल्मों में अभिनय किया। वे महिलाओं के कौमार्य संबंधी विवादास्पद बयान से 2005 में पहली बार देशभर में सुर्खियों में आई थीं। सालों उन्हें कई मुकदमों से भी जूझना पड़ा। सियासी पारी की शुरुआत 2010 में करुणानिधि की द्रमुक से की थी। पर एमके स्टालिन से मतभेद के चलते द्रमुक छोड़ 2014 में कांग्रेस में शामिल हुई। 6 साल तक सक्रिय भूमिका के बाद जब कांग्रेस में खुद को उपेक्षित पाया तो उसी भाजपा के झंडे तले आ गई जिसे कल तक पानी पी-पीकर कोसती थी। भाजपा को भी तो तमिलनाडु में पांव जमाने हैं। कोयंबटूर से आगे कभी अपना विस्तार नहीं कर पाई इस सूबे में भाजपा। ऐसे में खुशबू के सहारे ही सही, उपस्थिति तो दिखेगी ही। यह बात अलग है कि कांग्रेस जैसी स्वच्छंदता और भूमिका तो भाजपा में भी मिलने से रही खुशबू को।

कांग्रेस का कर्णधार कौन?

राजग में भले ही भगदड़ मची हुई है, लेकिन भाजपा दिन पर दिन मजबूत होती जा रही है। भाजपा ने अपने संगठन को मजबूत करने के साथ ही चौथी पीढ़ी को मुख्य धारा में महत्वपूर्ण पद देना शुरू कर दिया है। लेकिन कांग्रेस आज भी पुरानी परिपार्टी पर चल रही है। सोनिया गांधी के बाद कांग्रेस का कर्णधार कौन होगा, यह सवाल कांग्रेस में ही गूंज रहा है। इसकी वजह यह है कि आधी कांग्रेस राहुल गांधी को अध्यक्ष बनाने के पक्ष में है, तो आधे चाहते हैं कि नेहरू-गांधी परिवार के बाहर का कोई व्यक्ति अध्यक्ष बने। वहीं कुछ लोग यह भी चाहते हैं कि प्रियंका गांधी को पार्टी की कमान दी जाए। लेकिन जिस तरह के हालात दिख रहे हैं, उससे ऐसा लग रहा है कि राहुल गांधी को फिर से पार्टी की कमान दी जा सकती है। ऐसे में सवाल उठता है कि आखिर राहुल गांधी ने अध्यक्षी छोड़ी ही क्यों थी। अगर वे अब तक अध्यक्ष बने रहते तो पार्टी में युवा नेतृत्व का उभार हो गया होता।

ये दोस्ती हम नहीं तोड़ेंगे

मप्र की प्रशासनिक वीथिका में इन दिनों दो दोस्तों की खूब चर्चा हो रही है। इन दोस्तों में जो साहब सबसे पावरफुल हैं, उनको अपने सखा पर इतना विश्वास है कि उन्होंने मित्र को अपना पूरा काम सौंप दिया है। इस कारण मित्र की हैसियत भी पावरफुल अफसर वाली हो गई है। दोनों में दोस्ती इस कदर गहरी है कि बड़े साहब के ये सखा क्या करते हैं, यह किसी को मालूम नहीं है। या यूं कह सकते हैं कि साहब के सखा वह सबकुछ कर रहे हैं जो साहब चाहते हैं। दरअसल, बड़े साहब के पास समय का अभाव है। उन पर प्रशासन का पूरा भार है। वे सरकार के भी चहेते हैं। इसलिए उनका पूरा दिन मीटिंग में ही बीत जाता है। इसलिए साहब ने अपने खास सखा को उन कामों की जिम्मेदारी सौंप दी है, जो साहब समयाभाव नहीं कर पा रहे हैं। गौरतलब है कि साहब शांत, सख्त और सलीकेदार अफसरों में गिने जाते हैं। इसलिए अफसर हों, नेता हों, व्यावसायी हों या अन्य कोई साहब के सामने अपनी बात नहीं रख पाते हैं। ऐसे में साहब के सखा इन लोगों के लिए किसी जादुई चिराग से कम नहीं हैं। इन लोगों को साहब से जो भी काम कराना होता है, वे साहब के सखा को अपनी फरियाद सुना देते हैं। सखा सलीके से सबका काम करवा देते हैं। इसकी भनक भी किसी को नहीं लगती है। साहब के सखा के इस करतब से लोग तो खुश हैं हीं साहब को भी बहुत राहत मिल रही है।

माननीय की मनमानी

माननीयों की मनमानी से तो अफसर अक्सर हैरान-परेशान रहते ही हैं, लेकिन मप्र में तो एक माननीय मनमानी की हदें पार कर रहे हैं। प्रदेश सरकार के कद्दावर मंत्रियों में शुमार ये माननीय अपने रसूख के लिए हमेशा से ख्यात रहे हैं। माननीय को इस बात का हमेशा गुमान रहता है कि सरकार में वे जो चाहेंगे वही होगा। प्रदेश की वर्तमान सरकार को सत्ता में लाने की महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले इन माननीय को महत्वपूर्ण और पावरफुल विभाग का मंत्री बनाया गया है। लेकिन माननीय अपने पद की गरिमा का ख्याल नहीं रख रहे हैं। आलम यह है कि वे अफसरों की समझाइश को भी नजरअंदाज करके नियम विरुद्ध कार्य करवा रहे हैं। हद तो यह सुनने में आई है कि अफसरों की लाख समझाइश के बाद मंत्रीजी ने 307 के अपराधियों को भी रिवॉल्वर का लाइसेंस दिलवा दिया है। सरकार में संकटमोचक की भूमिका निभाने वाले माननीय अफसरों की बात को दरकिनार कर सरकार को संकट में डालने की मनमानी कर रहे हैं। उधर, माननीय की मनमानी से उनके विभाग के अफसर भी हैरान-परेशान हैं। पर बेचारे करें तो क्या करें। मंत्री की बात मानना उनकी जिम्मेदारी है और वे अपनी जिम्मेदारी निभा रहे हैं।

आखिर वो आपके कौन?

कहा जाता है कि राजनीति और प्रशासन में जो व्यक्ति जितना भ्रष्ट होता है, उसके उतने ही शुभचिंतक होते हैं। विगत दिनों इस बात की पुष्टि तब हो भी गई, जब एक आईपीएस अफसर को बचाने के लिए दो अफसर प्रशासनिक मुखिया के पास गुहार लगाने पहुंच गए। दोनों अफसरों की प्रशासनिक मुखिया से मुलाकात के बाद क्या हुआ यह तो वही लोग जानें, लेकिन उन दोनों अफसरों से यह पूछा जाने लगा है कि आखिर वो आपके कौन हैं? गौरतलब है कि जिन आईपीएस अफसर को बचाने के लिए दो अफसरों ने प्रशासनिक मुखिया के यहां जाकर गुहार लगाई है, वे साहब 1992 बैच के अधिकारी हैं। विगत दिनों उनके संदर्भ में एक ऑडियो वायरल हुआ था। उस ऑडियो में जिस तरह एक धंधेबाज साहब को हड़का रहा था, उससे शासन और प्रशासन की जमकर छीछालेदर हुई। उस ऑडियो के बाद लोगों का पुलिस प्रशासन से विश्वास भी उठने लगा है। क्योंकि उसमें जिस तरह उच्च स्तर के अफसर को एक अदना-सा धंधेबाज धमकी दे रहा था, उससे लोगों को लगने लगा है कि कानून व्यवस्था की जिम्मेदारी निभाने वाले अफसर किस कदर रिश्वतखोरी के दलदल में फंसे हुए हैं। हालांकि कुछ ही अफसर ऐसे हैं, लेकिन बदनाम तो पूरे कुनबे को होना पड़ रहा है। जिन साहब को बचाने के लिए दोनों अफसर भागदौड़ कर रहे हैं, उन साहब का पूरा कार्यकाल ही विवादों भरा रहा है। ऐसे में दोनों अफसरों पर भी उंगली उठ रही है।

दुक्की की कमाई पर डाका

प्रदेश के सबसे कमाऊ और बदनाम विभाग में इन दिनों यह चर्चा जोरों पर है कि यहां तो दुक्की (दो नंबर) की कमाई पर भी डाका डाला जा रहा है। हैरानी की बात तो यह है कि डाका भी कोई ऐरा-गैरा नहीं, बल्कि विभाग के मंत्री डाल रहे हैं। गौरतलब है कि यह विभाग अवैध कमाई के लिए ख्यात है। काली कमाई करने वाले इस विभाग में ईमानदारी इतनी है कि सबका हिस्सा समय पर पहुंचा दिया जाता है। लेकिन इस विभाग के मंत्रीजी को लक्ष्मी बटोरने का चस्का इस कदर लगा है कि वे हवलदार तक से भी वसूली करने से हिचक नहीं रहे हैं। मंत्रीजी की ललक का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि इस विभाग से पार्टी के लिए जो फंड जाता है उन्होंने उस पर ही डाका डाल दिया है। पार्टी को दिए जाने वाले फंड को वे अपने पास रख रहे हैं। मंत्रीजी की इस करतूत से हर कोई हैरान-परेशान है। गौरतलब है कि मंत्रीजी चुनावी मैदान में भाग्य आजमा रहे हैं। मंत्रीजी की हरकत को देखकर ऐसा लग रहा है जैसे उन्हें इस बात का आभास हो गया है कि वे उपचुनाव हार जाएंगे। इसलिए वे दोनों हाथ से दुक्की की कमाई पर डाका डाल रहे हैं।

एक म्यान में दो तलवार नहीं

प्रदेश की राजनीतिक वीथिका में इन दिनों हालात कुछ बदले-बदले से नजर आ रहे हैं। इस बदले हालात का नजारा विगत दिनों एक सगाई समारोह में देखने को मिला। दरअसल, एक पूर्व विधायक के यहां सगाई का कार्यक्रम था। सत्तारूढ़ दल के नेता होने के कारण उक्त पूर्व विधायक के यहां आयोजित सगाई समारोह में कई मंत्री, विधायक और नेता पहुंचे थे। सभी के सभी आयोजन की मस्ती में खोए हुए थे, तभी खबर आई की सरकार के मुखिया भी पधार रहे हैं। इससे आयोजन स्थल पर उत्साह और हर्ष की लहर दौड़ गई। लेकिन समारोह में शामिल कुछ मंत्री जाने की तैयारी करने लगे। इस पर आयोजक ने उनसे अचानक जाने का कारण पूछा एक मंत्री ने कहा-भाई तुम तो जानते ही हो की एक म्यान में दो तलवार कैसी रह सकती है। मंत्री का जवाब सुनकर पूर्व विधायक भौचक रह गए। उन्हें समझ में नहीं आया कि उक्त मंत्री ने ऐसा क्यों कहा? लेकिन एक बात तो सबकी समझ में आ गई है कि सरकार में सबकुछ अच्छा नहीं चल रहा है। सरकार के मुखिया के खिलाफ एक बड़ा वर्ग तैयार हो रहा है।

अक्स का आईना

बिहार में भाजपा और लोजपा की सरकार बनने जा रही है। तेजस्वी के बारे में कुछ सोचा ही नहीं, इसलिए उनके बारे में कैसे बोलूं। मेरी लड़ाई नीतीश कुमार से है और आखिरी सांस तक प्रधानमंत्री के साथ हूं। लोजपा इस बार कमाल दिखाने वाली है।

● **चिराग पासवान**

उद्धव ठाकरे ने दशहरा रैली के संबोधन में मुझे गाली दी, नमक हराम कहा, यह एक राज्य के मुख्यमंत्री के मुंह से अच्छा नहीं लगता। शर्म करो, आप मुख्यमंत्री की कुर्सी के लायक नहीं हो। आप नेपोटिज्म के सबसे खराब प्रोडक्ट हो। महाराष्ट्र और मुंबई आपकी नहीं है। यह भारत के हर एक नागरिक की है। इसलिए सोच-समझकर बोलना सीखें।

● **कंगना रनौत**

आईपीएल के इतिहास में पहली बार चेन्नई सुपरकिंग्स प्लेऑफ की दौड़ में नहीं पहुंचेगी। इसका मुझे ही नहीं चेन्नई के समर्थकों को भी दुख है। लेकिन यह खेल का हिस्सा है। कुछ लोग जीतते हैं, कुछ लोग हारते हैं। कुछ जीत और हार याद रहती हैं। सच्चे योद्धा संघर्ष करते हैं। उम्मीद है संघर्ष के बाद चेन्नई सुपरकिंग्स एक बार फिर उभरेगी।

● **साक्षी धोनी**

सोशल मीडिया प्लेटफार्म खासतौर से फेसबुक के जरिए इस्लामोफोबिया दुनियाभर में कट्टरता और हिंसा को बढ़ावा दे रहा है। मैं चाहता हूं कि जुकरबर्ग फेसबुक पर इस्लामोफोबिया और इस्लाम के खिलाफ नफरत पर उसी तरह प्रतिबंध लगाएं, जैसे होलोकास्ट पर लगाया है।

● **इमरान खान**

मुझे शादी में यकीन नहीं है। लेकिन 2012 में जब मुझे एहसास हुआ कि अगर आप शादीशुदा हैं तो आपको वीजा आसानी से मिल जाता है। तब मैंने ब्रिटिश म्यूजिशियन बेनेडिक्ट टेलर से शादी की। मुझे लगता है कि इस तरह की बाउंड्रीज नहीं होनी चाहिए। ऐसी बाउंड्रीज के कारण हमें कई बार बंधन में बंधना पड़ता है। मैं भी इसी कारण शादी के बंधन में बंधी हूं। मैं आजाद ख्याल की हूं, इसलिए मेरी इच्छा थी कि पूरा जीवन अपने तरीके से जिऊं। हालांकि अभी भी अपने हिसाब से ही जीती हूं, लेकिन कहीं न कहीं बंधन तो आ ही जाता है।

● **राधिका आप्टे**

वाक्युद्ध

मैं सौदेबाजी की राजनीति में विश्वास नहीं करता। मैं चाहता तो मैं भी ऐसी राजनीति कर सकता था, जैसी भाजपा कर रही है। लेकिन मैं मप्र को कभी कलंकित नहीं होने दूंगा। उपचुनाव में संभावित हार के डर से भाजपा जिस तरह की सौदेबाजी कर रही है, उससे प्रदेश की छवि देशभर में खराब हो रही है। लेकिन इन्हें समझाए कौन?

● **कमलनाथ**

कमलनाथ के पास बहुत संपत्ति है, करोड़ों रुपए हैं, लेकिन मानसिक रूप से वे दरिद्र हैं। उन्होंने जिस प्रकार के शब्दों की दरिद्रता दिखाई है, उससे प्रदेश की राजनीतिक प्रतिष्ठा खराब हुई है। इससे मध्यप्रदेश का हर एक व्यक्ति कांग्रेस से नाराज है। कमलनाथ की करनी का फल पूरी कांग्रेस को भोगना पड़ेगा।

● **कैलाश विजयवर्गीय**

कर्ज का बढ़ता मर्ज

बड़े बुजुर्ग हमेशा से कहते आए हैं कि कर्ज लेकर घी पीने की आदत ठीक नहीं। जितनी चादर हो उतने पैर पसारने चाहिए, वक्त-बेवक्त के लिए हमेशा थोड़ी पूंजी बचाकर रखो। अनुभवों के आधार पर बड़ों की इन नसीहतों से जो भी सबक नहीं लेता, उसे नुकसान निश्चित है। चाहे वो घर का मुखिया हो या देश, राज्यों में सत्ता संचालित करने वाले प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री। उनके किए का खामियाजा उनसे जुड़े हर शख्स, हर सूबे और तमाम पीढ़ियों को भुगतना पड़ता है। कर्ज लेकर तरक्की और भविष्य की बुनियाद मजबूत करने का कदम बुरा नहीं है, लेकिन जब उसका इस्तेमाल सार्थक, सुनियोजित न होकर व्यक्तिगत या जन, समाज, राष्ट्रहित के नाम पर सियासी हित साधने के लिए होने लगे, तो बदहाली के चक्रव्यूह में घिरना हमारी नियति बन जाएगी।

इन सारी नसीहतों और नतीजों का जिक्र इसलिए किया जा रहा है, क्योंकि हम मप्र के कदम आत्मनिर्भरता की बजाय कर्ज पर निर्भरता की ओर लगातार बढ़ते देख रहे हैं। दो साल पहले तक जिस राज्य सरकार के खजाने में 7-8 हजार करोड़ रुपए हमेशा पड़े रहते थे, वह इस समय पैसे-पैसे को मोहताज है। मार्च 2020 में तत्कालीन कमलनाथ सरकार के अपदस्थ होने के बाद राज्य में बनी शिवराज सरकार अपने कार्यकाल के 7 महीनों में राज्य को चलाने के लिए 10 हजार करोड़ का कर्ज ले चुकी है। सरकार नवंबर-दिसंबर में 6 हजार करोड़ का और कर्ज लेने के लिए तैयार है। इस वित्तीय वर्ष की समाप्ति तक राज्य पर कुल कर्ज 2 लाख 10 हजार 538 करोड़ रुपए हो चुका था, जो नए साल में वित्तीय वर्ष की समाप्ति तक 2 लाख 40 हजार करोड़ तक पहुंच सकता है। हर साल 30 से 40 हजार करोड़ का कर्ज सरकार पर बढ़ता जा रहा है। इसी अनुपात में ब्याज की रकम भी सालाना करीब 3 से 4 हजार करोड़ रुपए बढ़ रही है। वर्ष 2019-20 के वित्तीय वर्ष की समाप्ति तक राज्य सरकार कर्ज के मूल धन के रूप में 14 हजार 403 करोड़ रुपए और ब्याज के रूप में 14 हजार 803 करोड़ रुपए ब्याज के रूप में चुका रही थी, अब यह आंकड़ा और बढ़ जाएगा।

राज्य सरकार इस साल 23 मार्च को 750 करोड़, 30 मार्च को 750 करोड़, 7 अप्रैल को 500 करोड़, 2 जून को 500 करोड़, 9 जून को 500 करोड़, 7 जुलाई को 1000 करोड़, 14 जुलाई को 1000 करोड़, 4 अगस्त को 1000 करोड़, 12 अगस्त को 1000 करोड़, 9 सितंबर को 1000 करोड़, 6 अक्टूबर को 1000 करोड़ और 13 अक्टूबर को 1000 करोड़ का कर्ज ले चुकी है। आगे भी कर्ज लेने की तैयारी रिजर्व बैंक ने चालू वर्ष की अंतिम तिमाही का जो सांकेतिक कैलेण्डर जारी किया है, उसके मुताबिक अक्टूबर के बाद नवंबर और दिसंबर में मप्र सरकार कुल 6 हजार करोड़ का कर्ज लेने की कतार में लगी है। यह सारा उधार सरकार की जरूरत, बाजार के हालातों और केंद्र के इरादों पर निर्भर करेगा।

पिछले कुछ महीनों से हालात यह हैं कि सरकार के पास केवल वेतन देने लायक पैसा ही बच पाता है। हर महीने ओवर ड्राफ्ट की स्थिति से बचने के लिए सरकार को बाजार अथवा केंद्र सरकार से लगातार पैसा लेना पड़ रहा है। जितने बुरे हाल अभी हैं, ऐसी स्थिति 2003 में दिग्विजय सिंह के कार्यकाल के अंतिम दिनों में पैदा हुई थी। इस डैमेज कंट्रोल के लिए मुख्यमंत्री लगातार खुद भी बैठकें ले रहे हैं। वित्त विभाग के सचिव विभिन्न विभागों के साथ बैठकें कर आने वाले खर्चों का अनुमान लगा रहे हैं। अभी तो कर्ज मिल रहा है, इसलिए फिलहाल कोई दिक्कत नहीं है, अन्यथा सरकार पर ओवर ड्राफ्ट भी हो सकता है। ओवर ड्राफ्ट वो स्थिति है, जिसमें सरकार के पास आय कम और खर्च ज्यादा हो जाता है। ओवर ड्राफ्ट का होना, मतलब प्रदेश और सरकार की साख पर बट्टा लगना माना जाता है। विभागों से अनावश्यक खर्चों पर रोक लगाने के लिए कहा गया है। मुख्यमंत्री कोरोना के कारण राज्य की बिगड़ी अर्थव्यवस्था से चिंतित आर्थिक विशेषज्ञों से मशविरा भी कर रहे हैं कि कैसे प्रदेश को कर्ज से बचाया और अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाया जा सकता है।

ऐसा नहीं है कि राज्य के हालात कोई अचानक बिगड़ना शुरू हुए, प्रदेश की आर्थिक स्थिति दो-तीन साल पहले से ही नाजुक हालातों में पहुंचना शुरू हो गई थी। राज्य में जब 2018 में चुनाव होने वाले थे, उससे पहले ही सियासी चौसर पर लोकलुभावन वादों और योजनाओं की घोषणाओं के पांसे फेंके जाने लगे थे। अधूरी योजनाओं को पूरा करने के नाम पर राज्य सरकार केंद्र से ताबड़तोड़ कर्ज लेने लगी। कर्ज का पैसा स्कूल, शिक्षा, सड़क, पानी, बिजली, पुल, सिंचाई, रोजगार और तमाम अधोसंरचना के विकास के नाम पर लिया गया, लेकिन न अधूरी योजनाएं पूरी हो पा रही हैं, न नई योजनाओं की शुरुआत।

● सुनील सिंह

महामारी से बढ़ा संकट

राज्य वित्त विभाग के सूत्रों के मुताबिक कोरोना महामारी के कारण बीते 6 महीनों में राज्य सरकार को जीएसटी से होने वाली आय में 44 से 50 फीसदी तक की गिरावट आई है। जीएसटी कलेक्शन के अलावा कोरोना महामारी से पेट्रोल-डीजल, आबकारी और खनिज विभाग की कर वसूली भी प्रभावित हुई। कोरोना संक्रमण की वजह से आर्थिक गतिविधियां प्रभावित हुई हैं। न तो निर्माण कार्य गति पकड़ पा रहे हैं और न ही औद्योगिक गतिविधियां पटरी पर आ पाई हैं। इसी के कारण राज्य सरकार को अपना बजट आकार भी 28 हजार करोड़ घटाकर 2 लाख 5 हजार करोड़ से कुछ अधिक का करना पड़ा। कोरोना संकट की वजह से राज्य की अर्थव्यवस्था पर पड़े प्रभाव को देखते हुए केंद्र सरकार ने राज्य को लगभग साढ़े 14 हजार करोड़ रुपए अतिरिक्त कर्ज लेने की सशर्त अनुमति दी है। इसे मिलाकर राज्य सरकार वर्ष 2020-21 में 40 हजार करोड़ रुपए से ज्यादा का कर्ज ले सकती है। आर्थिक मामलों के जानकारों का अनुमान है कि कोरोना के बाद प्रदेश के कुल राजस्व में 30 फीसदी तक की गिरावट आ सकती है, जो कुल राजस्व की करीब 26 हजार करोड़ रुपए होगी।

> मप्र में 28 विधानसभा सीटों पर 3 नवंबर को उपचुनाव के लिए मतदान होंगे और 10 नवंबर को परिणाम आएंगे। उपचुनाव में कौन कितनी सीटें जीतेगा यह तो परिणाम आने के बाद ही पता चल पाएगा लेकिन इस उपचुनाव में भाजपा-कांग्रेस के दिग्गज नेताओं की साख दांव पर लगी हुई है। खासकर भाजपा के 4 और कांग्रेस के 2 दिग्गज नेताओं की राजनीति का भविष्य यह उपचुनाव तय करेगा।

राजनीतिक भविष्य का उपचुनाव

देश में पहली बार किसी एक राज्य की 28 सीटों पर एकसाथ चुनाव हो रहे हैं और इन उपचुनावों की जीत-हार दोनों पार्टियों का भविष्य वैसे ही तय करेगी जैसे आम चुनाव करते हैं। ऐसा पहली बार हो रहा है, जब भाजपा में शामिल हुए कांग्रेसी नेता मोदी-मोदी कर रहे हैं और भाजपा उन्हें गले लगा रही है। 2018 के विधानसभा चुनाव शिवराज और सिंधिया के बीच हुए थे और अब दोनों 2020 में मिलकर उपचुनाव लड़ रहे हैं और वह भी कांग्रेस के खिलाफ। इसलिए कहा जाता है कि युद्ध, प्यार और राजनीति में सब जायज है। लेकिन इस चुनाव में तीन नेताओं शिवराज सिंह चौहान, ज्योतिरादित्य सिंधिया और कमलनाथ की लोकप्रियता दांव पर है। मप्र में कौन कितना लोकप्रिय है, इसका फैसला 10 नवंबर को हो जाएगा। लेकिन इससे पहले इन तीनों नेताओं को अपनी लोकप्रियता की अग्निपरीक्षा देनी पड़ रही है।

उपचुनाव में भाजपा की कमान मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान के पास है और कांग्रेस की कमान कमलनाथ के पास। प्रचार अभियान में भाजपा ने सिंधिया को केवल ग्वालियर संभाग का दायित्व सौंपा है, जबकि कमलनाथ ने पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह को प्रचार से दूर रखा है। संभवत: कांग्रेस प्रत्याशी भी नहीं चाहते हैं कि उनके प्रचार अभियान में दिग्विजय सिंह आएं, जबकि भाजपा के चुनाव चिन्ह पर लड़ रहे प्रत्याशी चाहते हैं कि उनके प्रचार में सिंधिया जरूर रहें। इनका सोचना है कि सिंधिया जीत की गारंटी है। यह गारंटी किसी समय दिग्विजय सिंह के साथ जुड़ी थी। यह समय-समय की बात है।

आमतौर पर किसी भी उपचुनाव के नतीजे से किसी सरकार की सेहत पर कोई खास असर नहीं होता, सिर्फ सत्तारूढ़ दल या विपक्ष के संख्याबल में कमी या इजाफा होता है, लेकिन मप्र में 28 विधानसभा सीटों के उपचुनाव से न सिर्फ सत्तापक्ष और विपक्ष का संख्या बल प्रभावित होगा, बल्कि राज्य की मौजूदा सरकार का भविष्य भी तय होगा कि वह रहेगी अथवा जाएगी, इसलिए भी इन उपचुनावों को अभूतपूर्व कहा जा रहा है। इन उपचुनावों के परिणाम पर सरकार का भविष्य तय होगा। वैसे तो नवंबर की 3 और 7 तारीख को 11 राज्यों की 56 विधानसभा सीटों के लिए उपचुनाव हो रहे हैं, लेकिन उनमें मप्र विधानसभा की 28 सीटों के चुनाव काफी अहम हैं। वैसे तो संसद या विधानसभा के किसी भी सदन की किसी भी खाली सीट के लिए उपचुनाव होना एक सामान्य प्रक्रिया है लेकिन मप्र की 28 सीटों पर हो रहे उपचुनाव देश के संसदीय लोकतंत्र की एक अभूतपूर्व घटना है। राज्य की 230 सदस्यीय विधानसभा में 28 सीटों के लिए यानी 12 फीसदी सीटों के लिए उपचुनाव इसलिए भी ऐतिहासिक हैं कि इससे पहले किसी राज्य में विधानसभा की इतनी सीटों के लिए एकसाथ उपचुनाव कभी नहीं हुए।

प्रदेश में पहली बार यह भी देखने को मिल रहा है कि उपचुनाव की इस जंग में कांग्रेस, भाजपा, बसपा के साथ ही कई अन्य पार्टियां और निर्दलीय मैदान में हैं। प्रदेश के 19 जिलों के 28 विधानसभा क्षेत्रों में 355 प्रत्याशी चुनावी मैदान में हैं। इनमें से मुख्य मुकाबला भाजपा और कांग्रेस के बीच है। वहीं करीब एक दर्जन सीटों पर बसपा के कारण त्रिकोणीय मुकाबले की स्थिति निर्मित हो रही है। इस तरह इस उपचुनाव में 68 (भाजपा-28, कांग्रेस-28, बसपा-12) प्रत्याशी चुनावी मैदान में जीत के लिए दम लगा रहे हैं, जबकि 287 प्रत्याशी ऐसे हैं, जो वोट काटकर इनकी हार-जीत के गणित को प्रभावित करेंगे। इस कारण न तो भाजपा और न ही कांग्रेस इस बात को लेकर संतुष्ट है कि वह

दलबदलू नेता बने चुनौती

उपचुनाव में भाजपा और कांग्रेस के सामने एक जैसी चुनौती है। वह चुनौती हैं दलबदलू नेता। दरअसल, उपचुनाव में जहां भाजपा ने 25 सीटों पर उन नेताओं को प्रत्याशी बनाया है, जो कांग्रेस छोड़कर भाजपा में शामिल हुए हैं। वहीं कांग्रेस ने भी 9 दलबदलू नेताओं को टिकट दिया है। कांग्रेस से भाजपा में शामिल हुए सिंधिया समर्थकों के साथ दूसरे नेता भी भाजपा के टिकट से दलबदल के बाद चुनाव लड़ रहे हैं। ऐसे में दलबदलू नेताओं के साथ आए उनके कार्यकर्ता भाजपा के कार्यकर्ताओं के साथ कितना घुल मिल गए हैं। यह एक बड़ा सवाल है। इसी तरह भाजपा के कई दलबदलू नेता भी कांग्रेस के टिकट से चुनाव लड़ रहे हैं। ऐसे में उन नेताओं के समर्थक भाजपा छोड़कर कांग्रेस में आ गए हैं। कांग्रेस में भी भाजपा की तरह ही स्थिति है। ऐसे में दोनों पार्टियों का जोर कार्यकर्ताओं पर फोकस है। दोनों ही पार्टियां भाजपा और कांग्रेस के कार्यकर्ताओं के बीच तालमेल बिठाने की कोशिश कर रही है। बूथ लेवल पर भाजपा हो या फिर कांग्रेस अपनी पकड़ को मजबूत कर रही है। भाजपा प्रवक्ता पंकज चतुर्वेदी का कहना है कि उनकी पार्टी संगठन पर आधारित है। संगठन के कहने पर कार्यकर्ता कार्य करता है इसलिए कार्यकर्ता एकजुट है। उम्मीदवारों को जीत दिलाने के लिए पूरा जोर लगा रहा है।

सरकार बनाने के अंक गणित में सफल हो जाएंगे।

28 सीटों पर हो रहे उपचुनाव सरकार के साथ ही भाजपा-कांग्रेस के दिग्गज नेताओं की राजनीतिक किस्मत भी तय करेंगे। कांग्रेस सरकार में मंत्री और विधायक रहे जो 25 पूर्व विधायक चुनाव लड़ रहे हैं उनके लिए तो यह उपचुनाव जीवन-मरण के समान है। लेकिन इनसे भी अहम उनके लिए है जिनकी सरपरस्ती में ये चुनाव लड़ रहे हैं और जो इनको हराने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर रहे हैं। यानी भाजपा और कांग्रेस के दिग्गज नेताओं के लिए यह उपचुनाव उनकी लोकप्रियता का लिटमस पेपर भी है। इनमें मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान, केंद्रीय कृषि मंत्री नरेंद्र सिंह तोमर, भाजपा सांसद ज्योतिरादित्य सिंधिया, पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ, कांग्रेस सांसद दिग्विजय सिंह और भाजपा प्रदेश अध्यक्ष वीडी शर्मा शामिल हैं।

शिवराज सिंह चौहान के लिए व्यक्तिगत रूप से सत्ता में वापसी आसान नहीं रही है। उन्हें ज्योतिरादित्य सिंधिया और उनके साथी कांग्रेसी बागियों के साथ डील करनी पड़ी है। चौहान के इन बागियों को मंत्री पद तो देने ही पड़े साथ में सारे के सारे बागियों को टिकट भी देने पड़े। अब उपचुनाव में इनको जिताने की जिम्मेदारी भी इनके ऊपर है। केंद्रीय कृषि मंत्री नरेंद्र सिंह तोमर के बारे में कहा जाता है कि वे हमेशा से शिवराज के लिए भाग्यशाली साबित हुए हैं। इनका ग्वालियर-चंबल अंचल में दबदबा भी है। इसलिए इनके ऊपर भी भाजपा प्रत्याशियों को जिताने की बड़ी जिम्मेदारी है। ज्योतिरादित्य सिंधिया के लिए ये उपचुनाव सम्मान की लड़ाई है। जहां भाजपा ने सिंधिया के साथ कांग्रेस से बगावत करने वालों को टिकट दे दिए हैं, अब सिंधिया का भाजपा में क्या कद होगा ये इसी आधार पर तय होगा कि वो कितने उम्मीदवारों को जिता पाते हैं। अगर आधे से ज्यादा उम्मीदवार हारते हैं, तो सिंधिया को भाजपा में किनारे किया जा सकता है और दूसरी तरफ उनको कांग्रेस के हमले का भी सामना करना पड़ेगा। उपचुनाव में भाजपा प्रदेश अध्यक्ष वीडी शर्मा की लोकप्रियता का आंकलन भी होगा। शर्मा भी ग्वालियर-चंबल अंचल के नेता हैं।

15 साल बाद सत्ता में वापस आने के बाद भी कांग्रेस अपनी सरकार 15 माह ही चला पाई। माना जाता है कि कमलनाथ के कारण ही सिंधिया समर्थक मंत्री और विधायक पार्टी से बाहर हुए और सरकार गिर गई। इसलिए कमलनाथ के ऊपर सबसे बड़ी जिम्मेदारी है कि वे उपचुनाव में अधिक से अधिक सीटें जीतकर कांग्रेस को सत्ता में वापस लाएं। कमलनाथ के लिए ये शायद आखिरी मौका है कि वो मप्र के

क्या उम्मीदों पर खरा उतर पाएंगे सिंधिया?

देशभर में इस समय चर्चा का विषय यह बना हुआ है कि क्या मप्र में एक बार फिर कांग्रेस की सरकार बनेगी या कांग्रेस छोड़कर भाजपा का दामन थामने वाले नेता ज्योतिरादित्य सिंधिया कुछ जोरदार कमाल करेंगे। देश की जनता को इसका इंतजार है और उनका यह इंतजार 10 नवंबर को खत्म होगा। इसी बीच मप्र भाजपा के अध्यक्ष विष्णुदत्त शर्मा का कहना है कि ज्योतिरादित्य सिंधिया के भाजपा में शामिल होने से भाजपा की ताकत बढ़ी है। यह भाजपा के कार्यकर्ताओं ने भी महसूस किया है और वह सभी की सभी 28 सीटों पर पार्टी की जीत सुनिश्चित करने में लग गए हैं। गौरतलब है कि कांग्रेस विधायकों के एक वर्ग में विद्रोह होने से 15 माह पुरानी कमलनाथ के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकार मार्च माह में गिर गई थी। इसके बाद शिवराज सिंह चौहान के नेतृत्व में भाजपा की सरकार प्रदेश में बनी। अब जब उपचुनाव हो रहा है तो भाजपा को उम्मीद है कि सिंधिया अपने समर्थकों के साथ ही अन्य भाजपा प्रत्याशियों को विजयश्री दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे। लेकिन विधानसभा क्षेत्रों में चुनाव प्रचार के दौरान जिस तरह सिंधिया का विरोध देखने को मिला उससे सवाल खड़े हो रहे हैं कि क्या सिंधिया भाजपा की उम्मीदों पर खरा उतर पाएंगे।

मुख्यमंत्री बन पाएं। कमलनाथ अब 74 साल के हो गए हैं और जब तक मप्र में अगले विधानसभा चुनाव होंगे नाथ की उम्र 77 साल हो चुकी होगी। कांग्रेस में भी राहुल गांधी फिर से कमान संभाल सकते हैं और शायद वो 2023 चुनाव में मुख्यमंत्री पद के लिए नया चेहरा चुन सकते हैं। इसलिए कमलनाथ के लिए ये करो या मरो वाली स्थिति है।

इस चुनाव में एक और अहम किरदार हैं कांग्रेस नेता और पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह। तोमर और सिंधिया की तरह ही दिग्विजय सिंह भी ग्वालियर-चंबल क्षेत्र से आते हैं और ये चुनाव दिग्विजय सिंह के लिए सम्मान की लड़ाई बन गई है। कहा जाता है कि कांग्रेस में रहते हुए और कांग्रेस छोड़ते वक्त भी सिंधिया और दिग्विजय सिंह में तलवारें खिंची हुई थीं। उपचुनाव में दिग्विजय सिंह के बेटे जयवर्धन सिंह भी चुनाव प्रचार में अहम भूमिका निभा रहे हैं। इस बार दिग्विजय सिंह ने खुद को लो-प्रोफाइल रखा है और बेटे को ही आगे किया है। जयवर्धन सिंह भी सीधे कमलनाथ के साथ संपर्क में रहते हुए चुनाव की तैयारियों में लगे हैं।

प्रदेश की राजनीतिक और प्रशासनिक वीथिका में 28 सीटों पर हो रहे उपचुनाव को कमलनाथ, सिंधिया और शिवराज के भविष्य का चुनाव भी कहा जा रहा है। इसलिए चुनावी मोर्चे पर ये तीनों नेता सबसे अधिक सक्रिय दिख रहे हैं। लेकिन मुख्यत: ये उपचुनाव शिवराज और कमलनाथ के बीच में है। शिवराज के ऊपर अपनी सत्ता बरकरार रखने की चुनौती है, वहीं कमलनाथ सत्ता में वापसी की कोशिश में हैं। उपचुनाव में शिवराज एक बार फिर भाजपा की जरूरत बन गए हैं। इसकी वजह यह है कि शिवराज प्रदेश के एकमात्र ऐसे नेता हैं जिनका समन्वय बनाने में कोई सानी नहीं है। अपनी पार्टी ही नहीं विपक्ष से भी समन्वय बनाकर वे काम करते हैं। इसलिए पिछले चुनावों की तरह इस उपचुनाव में भी भाजपा को जिताने की पूरी जिम्मेदारी उनके ऊपर है। यही कारण है कि जो लोग कल तक नाराज थे, वे सभी पार्टी की इज्जत बचाने के लिए सक्रिय हो गए हैं। अब देखना यह है कि 3 नवंबर को मतदाता किसके भाग्य में क्या डालता है।

● कुमार राजेन्द्र

फर्जी पा रहे सम्मान निधि

कैसे हुई घोटाले की शुरुआत

देश में योजना लागू होने के बाद किसानों के पंजीयन के साथ ही फर्जीवाड़े की शुरूआत हो चुकी थी। सरकार की नजर में भी गड़बड़ी सामने आ चुकी थी। उसने 8 राज्यों के करीब एक लाख 20 हजार खातों से पैसा वापस भी लिया, क्योंकि खाताधारकों के नाम, पते व अन्य विवरण आपस में मेल नहीं खा रहे थे। सरकार के योजना में धांधली को लेकर उस समय कान खड़े हुए, जब पिछले सितंबर के महीने में अब तक का सबसे बड़ा घोटाला तमिलनाडु में सामने आया, जहां फर्जीवाड़ा करने वालों ने सिस्टम में सेंध लगाकर 110 करोड़ रुपए खातों से निकाल लिए। जरा इन आंकड़ों से अंदाजा लगाइए कि गड़बड़ी कितने बड़े स्तर की है, तमिलनाडु में अब तक 5.95 लाख लाभार्थियों के अकाउंट की जांच की गई, जिसमें से 5.38 लाख अकाउंट फर्जी निकले हैं। कई मंत्रियों के गृहजिलों में ही हजारों किसान अपात्र मिले हैं। सरकार की सख्ती के बाद 61 करोड़ रुपए ही वसूले जा सके हैं, जबकि सरकार 94 हजार करोड़ रुपए किसानों के बैंक अकाउंट में राशि भेज चुकी है।

पहले कर्जमाफी, यूरिया और उद्यानिकी घोटालों का शिकार हो चुका मप्र का किसान एक बार फिर छला गया है। इस बार उसके साथ यह छल प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि में फर्जीवाड़े की शक्ल में हुआ है। आपको जानकर हैरत होगी कि राज्य में 70 हजार से ज्यादा ऐसे लोगों के नाम सम्मान पाने वालों की सूची में जोड़ दिए, जो इस दुनिया में हैं ही नहीं। हजारों ऐसे भूमिहीन, टैक्स भरने वाले, नौकरी पेशा, धनाड्य लोग किसान बनकर सम्मान निधि की रकम पा रहे हैं, जिनके लिए यह योजना बनी ही नहीं है। यह सब हुआ कृषि विभाग, राजस्व विभाग, पटवारियों और दलालों की मिलीभगत से, जिन्होंने हजारों अपात्रों के नाम सूची में जुड़वाकर सरकार को लाखों की चपत दे दी। केंद्र सरकार की महत्वाकांक्षी प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना में फर्जीवाड़ा उजागर होने से प्रशासनिक महकमे में हड़कंप मच गया है।

तमिलनाडु, असम, उप्र और महाराष्ट्र की तरह मप्र में भी फर्जी किसान बनकर सम्मान निधि में करोड़ों की धांधली सामने आने पर केंद्र सरकार के कान खड़े हुए। सरकार ने योजना का लाभ लेने वाले सभी राज्यों को निर्देश दिए हैं कि 5 फीसदी लाभार्थियों का रैंडम फिजीकल वेरीफिकेशन कर अपात्रों की पहचान की जाए। साथ ही धोखेबाजों पर नकेल कसकर उनसे रकम वापस ली जाए। मप्र के अलावा यह तस्वीर तो उन चंद राज्यों की है, जहां लाखों फर्जी खाताधारकों और करोड़ों के घोटाले का पता चला है। प. बंगाल को छोड़कर योजना का लाभ लेने वाले सभी राज्यों की जांच जब सामने आएगी, तो यह घोटाला अरबों का आंकड़ा पार कर जाएगा। मप्र में प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना में फर्जीवाड़ा सामने आया है। फर्जी दस्तावेज से पंजीयन कराकर योजना का लाभ ले लिया गया। खंडवा तहसील में ही करीब 2300 ऐसे पंजीयन सामने आए हैं, जो अपात्र पाए गए हैं। इनसे अब तक 25 लाख रुपए वसूले जा चुके हैं।

खंडवा में अपात्रों ने कृषि भूमि नहीं होने के बावजूद स्वयं को किसान बताकर पंजीयन करा लिया और 2018-19 में 6-6 हजार रुपए की राशि ले ली। कई शासकीय सेवक और आयकर दाताओं ने भी लाभ ले लिया। जब इसकी भनक अधिकारियों को लगी तो हड़कंप मच गया। अपात्रों का डाटा समग्र आईडी के माध्यम से खंगाला गया और राशि वसूल करने के लिए तहसीलदार द्वारा नोटिस जारी किए जा रहे हैं। रतलाम जिले में 15,242 किसान अपात्र घोषित किए गए हैं, जबकि 2 लाख 52 हजार 887 किसान पात्र हैं। अपात्रों में ऐसे लोग भी हैं जो सरकारी नौकरी के साथ खेती करते हैं और इनकम टैक्स के दायरे में आते हैं।

झाबुआ में 30 हजार खाते ऐसे थे, जो अटक गए थे। वजह यह थी कि डुप्लीकेट आधार कार्ड किसानों ने लगा दिए। पुराने समय से कई किसानों के पास दो-दो आधार कार्ड बने हुए थे और उन्होंने अलग-अलग अपडेट कर दिए थे। इनकी जांच हो रही है। भू-अभिलेख के अधीक्षक सुनील कुमार राहणे के अनुसार जिले में एक लाख 33 हजार किसान पात्रता रख रहे थे, लेकिन तकनीकी त्रुटि से एक लाख 3 हजार किसानों के खाते में ही प्रथम किश्त जमा हो पाई। बड़वानी जिले में ऐसे 889 किसानों के खातों में राशि आ गई है, जो आयकरदाता हैं। अधीक्षक भू-अभिलेख मुकेश मालवीय ने बताया कि संबंधित तहसीलदारों के माध्यम से इन किसानों को नोटिस जारी किए गए हैं। खरगोन जिले में 1 लाख 85 हजार किसानों को योजना का लाभ मिल रहा है। 9 गांवों में सत्यापन करने पर 86 किसान अपात्र मिले हैं। इनसे 4 लाख 44 हजार रुपए की वसूली होगी। अन्य गांवों में सत्यापन कार्य की गति धीमी है।

इंदौर कृषि के संयुक्त संचालक आलोक मीणा कहते हैं- नियम है कि किसान सम्मान निधि उन्हीं किसानों को मिलनी चाहिए, जिनके पास कृषि भूमि है। हर जिले में सम्मान निधि का काम भू-अभिलेख विभाग कर रहा है। किसान के जमीन के खसरे के हिसाब से उसके खाते में ही राशि मिलती है। फिर भी यदि कहीं गड़बड़ी हो रही है तो इसे सुधरवाने में हम भू-अभिलेख विभाग को मदद करेंगे।

मप्र में सरकार को इस बड़े घपले का पता तब चला, जब उसके पास पहुंची लाभार्थी किसानों की संख्या अनुमान से कहीं ज्यादा हो गई। सतना का उदाहरण लें, तो वहां ऐसे किसानों की संख्या एक हजार से भी ज्यादा है। सूची में उन भूमिहीन फर्जी किसानों की संख्या ज्यादा है, जिन्होंने स्वपंजीयन किया है, लेकिन स्वपंजीयन के बाद उनकी पहचान को तहसीलदार ने सत्यापित किया है, इसके बाद उनके खातों में किसान सम्मान निधि की राशि मिलने लगी। सवाल यह है कि इतना बड़ा घोटाला तहसीलदार, पटवारी की जानकारी या उनके शामिल हुए बिना संभव है क्या? इन भूमिहीनों को किसान निधि की राशि मिलने का पता ही नहीं चलता, अगर ग्वालियर के भू-अभिलेख एवं बंदोबस्त विभाग अपर आयुक्त ने सतना कलेक्टर को पत्र न लिखा होता। पत्र में साफ-साफ लिखा गया कि भूमिहीनों को दी गई किसान सम्मान निधि वापस ली जाए, योजना से उनके नाम काटे जाएं।

● **लोकेश शर्मा**

ये नशा नहीं जहर है

धार्मिक नगरी उज्जैन में शराब के नाम पर जहरीला पेय पदार्थ (जहरीली शराब) पीने से 16 लोगों की मौत के बाद मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने नशे का अवैध कारोबार करने वालों के खिलाफ सख्त कदम उठाने का निर्देश दिया है। जहरीली शराब कांड में एसआईटी की रिपोर्ट के बाद उज्जैन एसपी मनोज कुमार सिंह, एडिशनल एसपी रूपेश द्विवेदी को हटा दिया गया है जबकि सिटी एसपी रजनीश कश्यप को निलंबित कर दिया गया है। वहीं खाराकुआ थाने के 2 पुलिसकर्मी अनवर और नवाज शरीफ को गिरफ्तार करने के बाद जेल भेज दिया गया है, जबकि महाकाल थाने के दो सिपाही इंद्र विक्रम सिंह और सुदेश खोड़े के खिलाफ भी आपराधिक मामला दर्ज कर लिया गया है। अभी इंद्र विक्रम और सुदेश फरार बताए जा रहे हैं। सबसे चौंकाने वाली बात यह है कि उज्जैन ही नहीं बल्कि प्रदेशभर में जहरीली शराब का गोरखधंधा जोरों पर है। नशे के लिए लोगों को शराब के नाम पर जो पेय पदार्थ दिया जाता है वह जहर ही है।

पुलिस अधिकारियों के मुताबिक जहरीली शराब तैयार करने के लिए आरोपियों द्वारा स्प्रिट का उपयोग किया जाता था। स्प्रिट में यूरिया, मेंटेक्स की नशीली गोली और पानी मिलाकर एक घोल तैयार होता था। जिसे प्लास्टिक की थैली में भरकर 10 रुपए से लेकर 20 रुपए तक गरीब मजदूरों को नशा करने के लिए बेचा जाता था। घटना वाले दिन केमिकल और नशीले पदार्थों का सही मिश्रण नहीं मिलने की वजह से नशा देने वाला लिक्विड मौत की नींद सुलाने वाला जहर बन गया। केवल उज्जैन ही नहीं बल्कि प्रदेश के अधिकांश जिलों में कच्ची शराब बनाने का गोरखधंधा चल रहा है। लॉकडाउन में रतलाम, झाबुआ, खंडवा, सतना, ग्वालियर, जबलपुर तेंदूखेड़ा, सागर, देवरी, रहली, गढ़ाकोटा सहित प्रदेश में सैकड़ों जगह कच्ची शराब बेचने के मामले सामने आए थे। शराब दुकानें बंद होने से उस समय कच्छी शराब की बोतल 300 रुपए तक बिकी।

आबकारी विभाग के सूत्रों के अनुसार प्रदेश के ज्यादातर आदिवासी बाहुल्य इलाकों में कच्ची शराब (लाहन) बनाने और बेचने का गोरखधंधा चल रहा है। शराब को ज्यादा नशीला बनाने के लिए उसमें यूरिया, धूतरा, बेसरमबेल की पत्ती और ऑक्सीटॉसिन जैसे घातक पदार्थ तक मिलाए जा रहे हैं। इनकी मात्रा ज्यादा होने से शराब जहरीली बनकर लोगों की जान ले सकती है। हालांकि अभी तक जहरीली शराब से मौत का कोई केस सामने नहीं आया है, लेकिन अंचल में चल रही कच्ची शराब की भट्टियों से उज्जैन सरीका हादसा होने से इंकार भी नहीं किया जा सकता। आबकारी व पुलिस छुटपुट कच्ची शराब पकड़ती रही है, लेकिन उज्जैन में जहरीली शराब के सेवन से हुई 16 लोगों की मौतों के बाद भी यहां बड़े स्तर पर कोई कार्रवाई नहीं हुई।

प्रदेश में सरकारी तंत्र का अवैध कारोबार

उज्जैन ही नहीं बल्कि मप्र के इतिहास में पहली बार यह देखने में आया है कि सरकारी तंत्र जहरीली शराब के मामले में लिप्त दिखाई दिया। एक तरफ जहां पुलिसकर्मी इस अवैध कारोबार में लिप्त पाए गए, वहीं उज्जैन नगर निगम के कर्मचारी सिकंदर, यूनुस भी संलिप्त रहे। दोनों को भी नगर निगम ने बर्खास्त कर दिया है। इस मामले में सहायक आयुक्त सुबोध जैन को भी निलंबित किया गया है। आरोपियों द्वारा जिस भवन में झिंझर तैयार की जाती थी वह भी नगर निगम का सरकारी भवन है। एसआईटी के मुताबिक जहरीली शराब के मामले में अभी और भी जांच चल रही है। इस मामले में मेडिकल स्टोर संचालक, डॉक्टर सहित अन्य लोगों को भी हिरासत में लिया गया है। अभी आरोपियों की संख्या और भी बढ़ सकती है।

देवरी के सलैया, श्रीनगर, बर्रा तलैया, सिंगपुर गंजन, समनापुर शाहजू, खकरिया में आदिवासी, बीना के बसारी टाड़ा, बेरखेड़ी टाड़ा में बंजारे, छिरारी में मुंडा समाज के लोग कच्ची शराब तैयार कर बेचने का काम कर रहे हैं। इसके अलावा जिले के और भी स्थानों पर कुचबंदिया, कंजर लोग कच्ची शराब के धंधे से जुड़े हुए हैं। रात में अमूमन हर गांव में कच्ची शराब की भट्टियां धधकती देखी जा सकती हैं। लॉकडाउन के समय मकरोनिया से लगे गांवों में कुचबंदिया समाज के लोगों ने शराब की भट्टियां लगा ली थीं। पुलिस की दबिश के दौरान सुअरमार बम फटने से एक आरक्षक घायल हो गया था।

कच्ची शराब में मुख्य रूप से महुआ का उपयोग होता है। यह एक तरह का जंगली फल है जो नौरादेही अभयारण्य से लगे गावों में बहुत ज्यादा पाया जाता है। महुआ को गुड़ में मिलाकर पहले उसे सड़ने के लिए रखा जाता है। इसके बाद खाली बर्तन या पीका में इसे भट्टी पर पकने के लिए रखा जाता है। एक नली के जरिए भाप को बोतल में उतारा जाता है। भाप ठंडी होने पर लिक्विड फॉर्म में आ जाती है। यही कच्ची शराब है। जिसे लाहन भी कहते हैं। यहां तक शराब जहरीली नहीं होती। जब लगता है कि शराब में नशा कम है तो फिर शुरू होता है खतरे का खेल। इसमें यूरिया, ऑक्सीटॉसिन, बेसरमबेल का उपयोग किया जाता है। इन पदार्थों को मिलाने का कोई मापदंड नहीं रहता। जिससे शराब जहरीली होने का खतरा बना रहता है। एक कुप्पा लाहन तैयार करने में 250 रुपए की लागत आती है। इससे एक से डेढ़ हजार रुपए की शराब तैयार होती है। रोज दो से पांच हजार रुपए दिन की कमाई रहती है। कच्ची शराब की बोतल 80 से 120 रुपए की बिक रही है।

विशेषज्ञों का कहना है कि मिथाइल एल्कोहल मौत की वजह बनती है। यूरिया नाइट्रोजन होता है जो शरीर में पहुंचकर नुकसान करता है। महुआ की कच्ची शराब में यूरिया और ऑक्सीटॉसिन जैसे केमिकल मिलाने से मिथाइल एल्कोल्हल बनता है। यही जहर का काम करता है और लोगों की मौत तक हो जाती है। मिथाइल शरीर में जाते ही अपने दुष्प्रभाव छोड़ता है। इससे शरीर के अंदरूनी अंग काम करना बंद कर देते हैं। इसकी वजह से कई बार तुरंत मौत हो जाती है। कई बार लोगों में यह प्रक्रिया धीरे-धीरे होती है।

● **राजेश बोरकर**

लागत से ज्यादा फायदा

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के ड्रीम प्रोजेक्ट स्वच्छ भारत मिशन पर पूरी दुनिया की निगाहें रही हैं। स्वच्छ भारत मिशन की शुरुआत अक्टूबर 2014 में हुई थी। इस मिशन पर सरकार ने कितना धन खर्च किया और लोगों तक उसका फायदा कितना पहुंचा, इसे लेकर एक अंतर्राष्ट्रीय शोध सामने आया है। इस शोध के तहत स्वच्छ भारत मिशन में आई लागत, स्वच्छता मानक में बदलाव और मिशन के तीन सालों में आए आर्थिक और सामाजिक बदलाव पर प्रकाश डाला गया है। इस शोध पत्र को गॉय हटन, निकोलस ऑस्बर्ट, सुमीत पाटिल और अवनी कुमार ने तैयार किया है। जिसका शीर्षक है– स्वच्छ भारत मिशन की लागत और इसके फायदे में परस्पर तुलना। जिसमें पाया गया है कि हर परिवार को इससे करीब 727 डॉलर की मदद पहुंची और डायरिया जैसे मामलों में 55 फीसदी, स्वच्छता में 45 प्रतिशत का सुधार हुआ।

केंद्र सरकार की महत्वाकांक्षी योजना स्वच्छ भारत मिशन से ग्रामीण भारत में प्रत्येक परिवार को 53,000 रुपए का फायदा पहुंचा है। अध्ययन के मुताबिक स्वच्छता मिशन के कारण दस्त की बीमारी में कमी और साफ-सफाई में लगने वाले समय की बचत हुई है। इस अध्ययन में यह भी पता चला है कि 10 सालों में घरेलू खर्च पर जो रिटर्न है वह लागत का 1.7 गुना है, जबकि समाज को 10 साल में कुल रिटर्न लागत का 4.3 गुना है। इस योजना का यह पहला विश्लेषण है। ग्लोबल इंफॉर्मेशन एनालिटिक्स मेजर एल्सेवियर के साइंस डायरेक्ट जर्नल के ताजा अंक में इस अध्ययन को प्रकाशित किया गया है। इसमें यह भी बताया गया है कि सबसे गरीबों को 2.6 गुना वित्तीय रिटर्न मिला है, जबकि समाज को लागत का 5.7 गुना रिटर्न मिला है।

यह सर्वे 20 जुलाई से 11 अगस्त 2017 के बीच 12 राज्यों के 10,051 परिवारों के बीच किया गया। इसमें बिहार, उप्र, झारखंड, आंध्रप्रदेश और असम आदि शामिल हैं, जहां पूरे देश का खुले में शौच का 90 फीसदी मामला है। उल्लेखनीय है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भारत को खुले में शौच से पूरी तरह मुक्त करने के लिए 2 अक्टूबर, 2014 को स्वच्छ भारत मिशन योजना की शुरुआत की थी और 2 अक्टूबर 2019 तक का लक्ष्य रखा था।

शोध के अनुसार जहां इस मिशन के चलते गरीब तबके को इसकी लागत का करीब 2.6 गुना फायदा हुआ है, वहीं समाज को 5.7 गुना फायदा पहुंचा है। यदि इसकी लागत और लाभ के अनुपात को देखें तो 10 सालों में घरेलू खर्च पर जो रिटर्न है वह लागत का 1.7 गुना है। जबकि समाज को इसकी लागत की तुलना में करीब 4.3 गुना ज्यादा फायदा पहुंचा है। अध्ययन के अनुसार सालभर में हर घर को जो करीब 53,536 रुपए का लाभ पहुंचा है, उसका 55 फीसदी दस्त की घटनाओं में कमी के कारण स्वास्थ्य को हुए लाभ के रूप में है। जबकि इससे समय की जो बचत हुई है वो इसके लाभ के 45 फीसदी के बराबर है।

नई सोच से महिलाओं के सम्मान में भी वृद्धि

स्पष्ट है कि मोदी सरकार की स्वच्छता को लेकर शुरू की गई महत्वाकांक्षी योजना, स्वच्छ भारत मिशन अपनी लागत की तुलना में बहुत ज्यादा फायदेमंद रही। इससे न केवल लोगों को व्यक्तिगत लाभ पहुंचा, साथ ही समाज में एक कुरीति का रूप ले चुकी खुले में शौच की प्रथा का भी अंत हुआ है। यह न केवल स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से लाभदायक है, साथ ही स्वच्छता की इस नई सोच से महिलाओं के सम्मान में भी वृद्धि हुई है। ऐसे में इस लाभ को बनाए रखने के लिए शौचालयों का प्रयोग आगे भी इसी तरह जारी रहना चाहिए। साथ ही इन शौचालयों का प्रबंधन भी ठीक तरह से होता रहे यह सुनिश्चित करने की जरूरत है, जिससे भविष्य में भी लोगों और समाज को इस मिशन का पूरा लाभ मिलता रहे।

गौरतलब है कि स्वच्छ भारत मिशन की शुरुआत अक्टूबर 2014 में की गई थी। यह मिशन दुनिया का अब तक का सबसे बड़ा स्वच्छता अभियान है। जिसका उद्देश्य खुले में शौच की प्रथा को खत्म करना और बीमारियों से मुक्त करना था। जहां एक दशक से टोटल सैनिटेशन मिशन और निर्मल भारत अभियान के बावजूद 2015 में देश के 59 फीसदी ग्रामीण और 12 फीसदी शहरी घरों में शौचालय नहीं थे। साथ ही 52.2 करोड़ लोग खुले में शौच कर रहे थे। वहीं इस मिशन के अंतर्गत करीब 10,69,67,234 शौचालय बनाए गए थे। आज 6 लाख से ज्यादा गांव खुले में शौच जैसी कुरीति से मुक्त हो चुके हैं। इस मिशन में हर शौचालय के लिए औसतन 29,162 रुपए (396 डॉलर) का भुगतान किया गया था, जो कि प्राप्त सब्सिडी से दोगुना है। जिसमें सरकार की हिस्सेदारी 9,352.4 रुपए (127 डॉलर) और परिवार की हिस्सेदारी 19,736 रुपए (268 डॉलर) की थी। इस 19,736 रुपए में से 18,926 रुपए (257 डॉलर) नकद और 810 रुपए (11 डॉलर) समय के रूप में खर्च किए गए थे।

अध्ययन के अनुसार दो-तिहाई (69.5 फीसदी) से अधिक परिवारों को औसतन 13,476 रुपए (183 डॉलर) की सरकारी सब्सिडी मिली थी। जबकि इन परिवारों में से 63.8 फीसदी ने सरकारी सब्सिडी के ऊपर हर टॉयलेट पर औसतन 11,341 रुपए (154 डॉलर) का खर्च अपनी जेब से किया था। इस शोध के लिए किए गए सर्वे में 12 राज्यों के 10,051 ग्रामीण परिवारों को शामिल किया गया था। इसमें बिहार, उप्र, मप्र, आंध्रप्रदेश, झारखंड और असम शामिल हैं। आंकड़ों के अनुसार देश में खुले में शौच करने वालों में से 90 फीसदी लोग इन्हीं राज्यों से थे।

● **विकास दुबे**

जमीनों का कारोबार

अभी तक एकेवीएन अपने स्तर पर ही जमीनों के आवंटन से लेकर विकास कार्यों और अन्य महत्वपूर्ण निर्णय खुद कर लेता था, लेकिन एक साल पहले एकेवीएन का मर्जर एमपीआईडीसी यानी मध्यप्रदेश औद्योगिक विकास निगम में कर दिया गया, उसके बाद से ही सारी फाइलें भोपाल जाने लगीं और आवंटन सहित तमाम कार्य ठप पड़े हैं। इतना ही नहीं 30 से 40 लाख रुपए एकड़ की औद्योगिक जमीन अब 95 लाख रुपए एकड़ तक कर दी गई है। वहीं विकास शुल्क सहित अन्य राशि भी बढ़ा दी गई। नतीजतन अब उद्योग निवेश के लिए कम ही तैयार होंगे, क्योंकि इससे सस्ती जमीन निजी क्षेत्र से हासिल हो जाएगी, जहां पर लीज, मैंटेनेंस से लेकर अन्य राशि भी नहीं चुकानी पड़ेगी।

वर्षों पहले एकेवीएन को लूप लाइन माना जाता था। यानी उसमें एमडी के पद पर तबादला होकर आने वाले अधिकारी सिर्फ टाइम पास करते थे। मगर वर्तमान कलेक्टर मनीष सिंह की जब एकेवीएन इंदौर में पोस्टिंग हुई तो उन्होंने उसका ढर्रा बदल दिया। कॉर्पोरेट शैली में दफ्तर बनाया, जो कि अब आईटी पार्क खंडवा रोड में शिफ्ट हो गया है। अभी तक एकेवीएन इंदौर ही पीथमपुर और अन्य औद्योगिक क्षेत्रों से संबंधित सारे महत्वपूर्ण निर्णय ले लेता था और पिछले एमडी कुमार पुरुषोत्तम ने भी जमकर काम किया और बड़े पैमाने पर निवेश भी आया, जबकि देशभर में आर्थिक मंदी थी, लेकिन पीथमपुर में धड़ाधड़ उद्योग खुलते रहे। उसके बाद सालभर पहले एकेवीएन को एमपीआईडीसी यानी मध्यप्रदेश औद्योगिक विकास निगम में मर्ज कर दिया गया। जबकि इंदौर एकेवीएन ही सबसे अधिक राजस्व अर्जित करके देता रहा, लेकिन अब सारी फाइलें भोपाल जाने लगीं, जहां आसानी से अनुमतियां नहीं दी जाती हैं, जिसके चलते उद्योगों को परेशानी हो रही है और अब कोई नया निवेश भी कम आएगा। पहले 30 से 40 लाख रुपए प्रति एकड़ तक उद्योगों की थी, जो अब 95 लाख रुपए प्रति एकड़ तक हो गई है। इसी तरह मैंटेनेंस यानी रखरखाव पहले 2 से 4 रुपए प्रति स्क्वायर फीट था, वह अब बढ़कर 8 रुपए स्क्वायर फीट कर दिया गया। वहीं 6 महीने पहले 50 प्रतिशत प्रीमियम की राशि भी बढ़ा दी गई। अभी कल ही एक नए आदेश के जरिए विकास शुल्क की राशि भी लगभग दो गुना तक कर दी है।

गौरतलब है कि पीथमपुर में स्मार्ट इंडस्ट्रीयल पार्क जो विकसित किया गया वह अत्यंत सफल साबित हुआ, जिसके सारे भूखंडों की बिक्री हो चुकी है और मुश्किल से 2-4 भूखंड ही बचे हुए हैं। वहीं मध्यप्रदेश औद्योगिक विकास निगम अब पीथमपुर औद्योगिक निवेश सेक्टर 4 और 5 को विकसित करने की तैयारी कर रहा है। पहले एकेवीएन अलग था, मगर अब उसे एमपीआईडीसी में ही मर्ज कर दिया गया है। इसके इंदौर रीजन के एग्जीक्यूटिव डायरेक्टर रोहन सक्सेना का कहना है कि पीथमपुर निवेश क्षेत्र और प्रबंधन योजना 2016 में लागू की गई थी, जिसमें औद्योगिक विकास में निजी भू-धारकों को पार्टनर बनाते हुए भूमि अधिग्रहण के लिए लैंड पुलिंग योजना 2019 में लागू की गई। अभी सेक्टर 4 और 5 के लिए 586 हैक्टेयर यानी लगभग 1400 एकड़ जमीनों पर पहले और दूसरे चरणों में विकास किया जाना है और इन्फ्रास्ट्रक्चर के लिए लगभग 550 करोड़ रुपए की राशि खर्च होगी। इस पूरे प्रोजेक्ट को दो चरणों में विकसित करने की अनुमति शासन ने भी सितंबर में हुई कैबिनेट बैठक में दे दी थी, जिसके चलते 121 किसानों की लगभग निजी 320 हैक्टेयर यानी 800 एकड़ जमीन लैंड पुलिंग पद्धति से अधिग्रहित की जा रही है और इन सभी किसानों ने भी जमीन अपनी सहमति दे दी है। एमपीआईडीसी के पास पहले से अविकसित भूमि 76.19 के अलावा सरकारी भूमि 189. 90 एकड़ भी मौजूद है। इस तरह निजी, सरकारी और अविकसित कुल जमीन 586 हैक्टेयर होती है, जिसमें यह प्रोजेक्ट अमल में लाया जाना है। जमीन मालिक और एमपीआईडीसी के बीच भूमि हस्तांतरण अभिलेख यानी अनुबंध निष्पादित किया जाएगा। उक्त अनुबंध के आधार पर दोनों पक्ष, जिनमें भूमि स्वामी और एमपीआईडीसी अपने-अपने हिस्से के भूखंड अन्य किसी को भी विक्रय कर सकेंगे। भूमि स्वामियों को दिए जाने वाले मुआवजे की गणना कलेक्टर गाइडलाइन के मुताबिक कृषि भूमि के मूल्य की दोगुना राशि, जिसका 20 प्रतिशत नकद और शेष 80 प्रतिशत विकसित आवासीय और वाणिज्यिक भूमि के रूप में गाइडलाइन के मान से ही आवंटित किया जाएगा। इसके लिए 20 प्रतिशत जो नकद राशि दी जाना है वह लगभग 95 करोड़ रुपए होती है, जो एमपीआईडीसी को शासन से प्राप्त होगी और उसका वितरण किया जाएगा।

● जितेन्द्र तिवारी

उद्योगों के लिए 800 एकड़ जमीन लैंड पुलिंग से लेंगे

मध्यप्रदेश औद्योगिक विकास निगम पीथमपुर में सेक्टर 4 और 5 को विकसित कर रहा है। नए भूमि अधिग्रहण कानून और उसके बाद शासन द्वारा घोषित की गई लैंड पुलिंग पॉलिसी 2019 को अमल में लाते हुए 121 किसानों की लगभग 800 एकड़ निजी जमीनों को आपसी सहमति से अधिग्रहित किया जा रहा है, जिसमें नकद मुआवजे के रूप में 20 प्रतिशत राशि और शेष 80 प्रतिशत आवासीय और वाणिज्यिक भूमि के रूप में आवंटित की जाएगी। दो चरणों में कुल 1400 एकड़ से अधिक जमीनों को विकसित किया जाना है, जिसमें लगभग 600 एकड़ जमीन सरकारी भी शामिल है। इस पूरी योजना पर 550 करोड़ रुपए इन्फ्रास्ट्रक्चर पर खर्च होने का अनुमान लगाया गया है, जिसकी मंजूरी पिछले दिनों हुई कैबिनेट बैठक में दी गई।

‘

कोरोना महामारी के कारण किए गए लॉकडाउन ने देश की अर्थव्यवस्था को पूरी तरह तोड़कर रख दिया है। बेरोजगारी चरम पर पहुंच गई है। लेकिन चुनाव के इस दौर में कोरोना गाइडलाइन का जमकर उल्लंघन हो रहा है। आलम यह है कि मामला हाईकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट तक पहुंच गया है। फिर भी स्थिति यह है कि माननीय भीड़ जुटाने में तनिक भी परहेज नहीं कर रहे हैं।

’

कोरोना पर भारी वोटों की मारामारी

देश में कोरोना महामारी की चपेट में अब तक लाखों लोग आ चुके हैं। आलम यह है कि कोरोना का संक्रमण लगातार बढ़ रहा है। उसके बावजूद बिहार विधानसभा चुनाव के साथ ही मप्र में 28 सीटों पर होने वाले उपचुनाव में कोविड-19 की गाइडलाइन का पालन नहीं हो रहा है। आलम यह है कि उपचुनाव के दौरान आयोजित होने वाली रैलियों में भीड़ को देखकर ग्वालियर हाईकोर्ट ने रैली पर रोक लगाई तो माननीय सुप्रीम कोर्ट पहुंच गए। सुप्रीम कोर्ट ने माननीयों की बात मानते हुए उन्हें कोविड-19 की गाइडलाइन का पालन करते हुए रैली और सभाएं करने की छूट दे दी है। लेकिन कहीं भी गाइडलाइन का पालन नहीं हो रहा है। कोरोना पर वोटों की मारामारी भारी पड़ रही है।

वोटों के लिए मारामारी कोरोना की महामारी पर किस कदर भारी पड़ रही है, इसका अनुमान मप्र में 28 विधानसभा सीटों पर 3 नवंबर को होने वाले उपचुनावों के लिए हो रही रैलियों, सभाओं में सोशल डिस्टेंसिंग की उड़ रही धज्जियों को देखकर लगाया जा सकता है। चुनावी घमासान में व्यस्त नेताओं को न तो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की नसीहतें सुनाई पड़ रही हैं, न अदालतों के फरमान। जनता की जान की कीमत इनके लिए महज एक वोट से ज्यादा नहीं है। चुनाव के दौरान कोरोना से सुरक्षित रहने के लिए केंद्रीय गृह मंत्रालय की गाइडलाइंस को भी इन नेताओं ने जैसे कूड़ेदान में फेंक दिया है। बार-बार की हिदायतों के बाद भी नाफरमानी देख आखिरकार मप्र हाईकोर्ट की ग्वालियर बैंच को कानून का डंडा चलाते हुए यह कहना पड़ा कि उम्मीदवार को चुनाव प्रचार का अधिकार है, तो लोगों को जीने के साथ-साथ स्वस्थ रहने का भी अधिकार है। उम्मीदवार के अधिकार से जनता का स्वस्थ रहने का अधिकार ज्यादा बड़ा है।

कोर्ट ने सख्त तेवर अपनाते हुए यहां तक आदेश दे दिया कि ग्वालियर-चंबल संभाग के 9 जिलों में कोई भी सभा या रैली चुनाव आयोग की अनुमति के बाद ही की जा सकेगी। कलेक्टर की भूमिका पोस्टमैन जैसी कर दी गई है, जो चुनाव आयोग से अनुमति के लिए अनुशंसा ही कर सकेगा। उधर, हाईकोर्ट के दखल से नाराज चुनाव आयोग सुप्रीम कोर्ट जा पहुंचा। आयोग ने अपनी याचिका में कहा कि चुनाव कराना उसका डोमेन है। हाईकोर्ट का फैसला मतदान की प्रक्रिया को प्रभावित कर सकता है। पहले से ही कोरोना वायरस संकट के दौरान चुनाव कराने के दिशा-निर्देश तय हैं, इसलिए हाईकोर्ट के फैसले पर रोक लगाई जाए। वहीं इस अदालती फरमान से कांग्रेस-भाजपा सहित सारे राजनीतिक दल भी बौखला गए। मुख्यमंत्री शिवराज सिंह ने अदालत के इस फैसले को एक देश में दो विधान जैसी स्थिति बताते हुए सुप्रीम कोर्ट में चुनौती देने की बात कही। हालांकि चुनाव आयोग की याचिका पर सुनवाई करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने रैली की फिर से छूट दे दी है।

मोदी की नसीहतें भी अनसुनी कर रहे नेता

बता दें कि देश में कोरोना महामारी की दस्तक के बाद 19 मार्च को अपने राष्ट्र के नाम पहले संबोधन से लेकर आज तक प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अपने संबोधनों में बार-बार दो गज की दूरी, मास्क है जरूरी, जब तक दवाई नहीं, तब तक ढिलाई नहीं, जैसे वाक्य बोलकर पूरे देश को कोरोना महामारी से बचने के लिए सतर्कता बरतने की नसीहतें दे रहे हैं, जिन्हें उनकी अपनी पार्टी के नेता ही नहीं मान रहे। मास्क न लगाने पर बुल्गारिया के प्रधानमंत्री पर 13 हजार रुपए के जुर्माने का जिक्र करते हुए मास्क की अहमियत समझाई थी और प्रशासनिक अमले से ऐसी ही चुस्ती की उम्मीद जताई थी। अभी 20 अक्टूबर को उन्होंने राष्ट्र के नाम अपने एक और संबोधन में कहा ‘अगर आप लापरवाही बरत रहे हैं, तो आप अपने आपको, अपने परिवार को, अपने परिवार के बच्चों, बुजुर्गों को उतने ही बड़े संकट में डाल रहे हैं। हमें ये नहीं भूलना है कि लॉकडाउन भले ही चला गया हो, लेकिन वायरस नहीं गया है।’ लेकिन उनके इन निर्देशों का राजनीतिक स्तर पर पालन नहीं हो रहा है।

सामाजिक-धार्मिक कार्यक्रमों पर पहरा क्यों?

यहां बता दें कि शादी, मौत, मुंडन, सामाजिक कार्यक्रमों में 10, 20 या 50 लोगों को शामिल होने की छूट है, लेकिन राजनीतिक आयोजनों में लोगों की भीड़ उमड़ रही है, मास्क तो छोड़िए, सोशल डिस्टेंसिंग का भी पालन नहीं हो रहा है। राज्य में चुनाव हैं तो क्या राजनीतिक दलों को लोगों की जान से खिलवाड़ करने की छूट दे दी जानी चाहिए, यह एक बड़ा सवाल है। प्रदेश में चुनावी सभाओं में राजनीतिक दलों द्वारा कोविड गाइडलाइन के उल्लंघन को लेकर मप्र हाईकोर्ट की ग्वालियर खंडपीठ द्वारा जारी किए गए आदेश पर सुप्रीम कोर्ट ने रोक लगा दी है। मप्र हाईकोर्ट के आदेश के खिलाफ चुनाव आयोग और भाजपा प्रत्याशी प्रद्युम्न सिंह तोमर ने अपील दायर की थी। जिस पर सुप्रीम कोर्ट ने रोक लगा दी है। अब राजनीतिक दल पहले की तरह चुनावी सभाएं कर रहे हैं। यानी सभा के लिए उन्हें चुनाव आयोग से अनुमति लेने की जरूरत नहीं पड़ रही है। हालांकि सभाएं कोरोना गाइडलाइन का पालन करते हुए की जाएंगी, लेकिन ऐसा कहीं भी देखने को नहीं मिल रहा है। ऐसे में सवाल उठ रहा है कि आखिरकार सामाजिक और धार्मिक कार्यक्रमों पर ही पहरा क्यों लगाया गया है।

बता दें कि मप्र की 28 विधानसभा सीटों पर 3 नवंबर को वोट डाले जाएंगे और 10 नवंबर को नतीजे घोषित किए जाएंगे। इन 28 में से सबसे ज्यादा करीब 16 सीटें ग्वालियर-चंबल संभाग में हैं। यहां की तकरीबन सभी सीटों पर सिंधिया समर्थक वो सारे नेता उम्मीदवार हैं, जिन्होंने कमलनाथ सरकार में मंत्री-विधायक रहते हुए बगावत कर दी थी और सिंधिया के साथ भाजपा में शामिल होकर मार्च 2020 में शिवराज सिंह के नेतृत्व में सरकार बनवा दी थी। अब उपचुनाव में इन सीटों पर जीतना भाजपा और कांग्रेस दोनों के लिए नाक का सवाल है। चुनाव में मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान, ज्योतिरादित्य सिंधिया, नरेंद्र सिंह तोमर, भाजपा अध्यक्ष वीडी शर्मा लगभग पूरे समय ही यहां डेरा डाले हैं, दूसरी ओर कमलनाथ और कांग्रेस की टीम इन्हीं सीटों पर जोर मार रही है। दोनों ही दलों ने अपने-अपने स्टार प्रचारकों के साथ चुनावी रैलियों और सभाओं के जरिए हल्ला बोल रखा है।

ये कोई पहली बार नहीं है कि ग्वालियर हाईकोर्ट ने टिप्पणी की हो। इससे पहले 21 सितंबर को भी हाईकोर्ट ने नेताओं को फटकार लगाते हुए कहा था कि आप कितने भी बड़े हों, लेकिन याद रखिए कि कानून आपसे भी बड़ा है। हाईकोर्ट की यह टिप्पणी सिंधिया, शिवराज, कमलनाथ समेत कई नेताओं के कार्यक्रमों में उमड़ी भारी भीड़ के चलते कोरोना गाइडलाइन के उल्लंघन के बाद सामने आई थी। बता दें कि मप्र के इंदौर, भोपाल के अलावा ग्वालियर समेत पूरे संभाग में कोरोना अपने चरम पर था और दो-दो सौ मरीज रोज मिल रहे थे, तब 22 से 24 अगस्त तक भाजपा ने ग्वालियर में उपचुनाव से पहले अपना शक्ति प्रदर्शन करने के मकसद सदस्यता अभियान के रूप में बड़ा राजनीतिक आयोजन किया था, जिसमें सोशल डिस्टेंसिंग की धज्जियां उड़ाते हुए रोज हजारों लोगों का हुजूम उमड़ा था। इन आयोजनों में खुद कोरोना के शिकार हो चुके शिवराज सिंह चौहान, ज्योतिरादित्य सिंधिया, वीडी शर्मा समेत कई नेता सबसे आगे थे। सदस्यता अभियान के कुल 19 आयोजन ग्वालियर-चंबल संभाग में किए गए थे।

उस समय एक जनहित याचिका के बाद हाईकोर्ट ने तीन वकीलों को न्यायमित्र भी बनाया था, जो किसी राजनीतिक गतिविधि या अन्य आयोजन में गाइडलाइन की अवहेलना होने पर प्रिंसिपल रजिस्ट्रार के माध्यम से हाईकोर्ट को अवगत कराने का काम कर रहे हैं। याचिका में फोटोग्राफ्स के साथ तात्कालिक राजनीतिक गतिविधियों के उल्लेख को देखने को बाद कोर्ट ने कहा था कि जो राजनेता और प्रशासनिक अफसर जो भी हैं, वह गैर जिम्मेदाराना तरीके से काम कर रहे हैं। आमआदमी, राजनेता और राज्य के मुखिया को भी कानून का सम्मान करना आवश्यक है। ऐसा नहीं है कि भाजपा के ही कार्यक्रमों में कोरोना गाइडलाइंस भुलाई गई हों, कांग्रेस नेता कमलनाथ, अजय सिंह, जीतू पटवारी, विजय लक्ष्मी साधौ व अन्य नेताओं के कार्यक्रमों में भी ऐसी ही भीड़ उमड़ी और सोशल डिस्टेंसिंग गायब दिखी।

ये सवाल भी उठना लाजिमी है कि क्या कोरोना के लिए लागू नियम आम जनता और राजनीतिक दलों और नेताओं के लिए अलग-अलग हैं? क्या कोरोना जनता और नेता दोनों को देखकर अलग-अलग व्यवहार करता है? क्या जनता पर गाइडलाइंस का डंडा घुमाने वाले कलेक्टरों और दीगर अफसरों को यह बात समझ में नहीं आती। खंडवा जैसी जगह में जहां हाल ही में ज्योतिरादित्य सिंधिया की एक सभा के दौरान पंडाल में बैठे एक बुजुर्ग की मौत होने और खबर फैलने के बाद भी किसी को शर्म नहीं आती और संवेदनाओं को ताक पर रख सभा चलती रहती है। पूरे उपचुनाव वाले इलाकों में नेताओं की जानलेवा लापरवाही को देखते हुए ग्वालियर हाईकोर्ट में बहुत ही व्यथित होकर यह टिप्पणी स्वाभाविक लगती है, जिसमें उसने कहा कि सभाओं में सोशल डिस्टेंसिंग का पालन नहीं हो रहा है। नेता लोगों के स्वास्थ्य के प्रति संवेदनशील, सजग और उदार नहीं दिख रहे। उन्हें चुनाव की चिंता है, लेकिन जनता के स्वास्थ्य की नहीं। लेकिन हाईकोर्ट की व्यथा को न तो चुनाव आयोग और न ही नेताओं ने समझा। अब एक बार फिर से चुनावी सभाओं में भीड़ जुटने लगी है। स्वास्थ्य विशेषज्ञों का कहना है कि उपचुनाव में जिस तरह कोविड-19 के दिशा-निर्देशों का उल्लंघन देखने को मिल रहा है उससे चुनावी क्षेत्रों में बड़े स्तर पर कोरोना विस्फोट सामने आ सकता है।

● अरविंद नारद

नहीं रुकी बच्चों की तस्करी

मप्र में मानव तस्करी सरकार के लिए सबसे बड़ी समस्या बनी हुई है। आलम यह है कि कोरोनाकाल में भी बच्चों की तस्करी रुकी नहीं। इंदौर के एक अस्पताल में नवजात बच्चों की तस्करी का मामला सामने आने के बाद एक बड़े नेटवर्क का पर्दाफाश हुआ है। इस मामले में जितने भी लोग गिरफ्तार हुए हैं पुलिस को उनका कोई न कोई कनेक्शन करुणानिधि मेटरनिटी एवं नर्सिंग होम से मिला है। डॉ. भरत मौर्य का नाम भी सामने आया है लेकिन ऐसा नहीं है कि केवल करुणानिधि हॉस्पिटल ही इसमें इंवॉल्व है। दरअसल, पूरे इंदौर में नवजात बच्चों की मानव तस्करी का खेल चल रहा है। ऐसी लड़कियां जो शादी से पहले मां बन जाती हैं, उनकी अनचाही संतान होगी इंदौर के कई नर्सिंग होम में डॉक्टरों द्वारा सौदा किया जाता है। वहीं जबलपुर में दो बहनों को गिरफ्तार किया गया है, जो नाबालिग लड़कियों को बहला-फुसलाकर अपहरण करती थीं और बाद में पैसे लेकर उनकी शादी करवा देती थीं।

मप्र में बच्चों की तस्करी दशकों से हो रही है। उन्हें मजदूरी कराने के लिए तस्करी कर दूसरे प्रदेशों में ले जाया जाता है। ऐसे ही 29 बाल मजदूरों को जुलाई में हैदराबाद पुलिस ने दलालों के हाथ से मुक्त कराया। सभी बच्चे मप्र के बालाघाट जिले के रहने वाले हैं। उनकी उम्र 10 से 14 साल के बीच है। सबसे हैरानी की बात यह है कि कोरोना संक्रमण के कारण किए गए लॉकडाउन में भी बच्चों की तस्करी रुकी नहीं। प्रदेश में बड़े पैमाने पर नाबालिग बच्चे लापता हो रहे हैं। शासन और प्रशासन की तमाम कोशिश के बाद भी तस्करी पर अंकुश नहीं लग पा रहा है।

हाल ही में जारी हुई केंद्र सरकार की रिपोर्ट चौंकाने वाली है। इस रिपोर्ट के मुताबिक बच्चों के लापता होने के मामले में देश में मप्र पहले नंबर है। प्रदेश से रोजाना 25 से ज्यादा और महीने में 800 से ज्यादा बच्चे गुमशुदा हो रहे हैं। ये रिपोर्ट जनवरी 2014 से दिसंबर 2019 तक की है। इन 6 सालों में प्रदेश से 52 हजार 272 बच्चे गुम हो चुके हैं। देश में 3 लाख 18 हजार 748 गुमशुदा बच्चों में बीस फीसदी अकेले मप्र से हैं। इन 6 सालों में छत्तीसगढ़ में 12 हजार 963 और राजस्थान से 6 हजार 175 बच्चे लापता हुए हैं। ये हालत तब है जबकि पिछले तीन सालों में पुलिस आधुनिकीकरण पर प्रदेश में 100 करोड़ रुपए खर्च किए जा चुके हैं। इस रिपोर्ट को लेकर प्रदेश सरकार सकते में है। इन 6 सालों में पिछले पांच साल भाजपा सरकार प्रदेश में रही है। इन गुमशुदा बच्चों को मानव तस्करी से जोड़कर भी देखा जा रहा है। एंटी ह्यूमन ट्रेफिकिंग यूनिट यानी एएचटी यूनिट के हवाले से आई रिपोर्ट में प्रदेश में पिछले 3 सालों में नाबालिग बच्चों की तस्करी का अनुपात बढ़ते हुए दोगुने से ज्यादा हो गया है।

लॉकडाउन में भी खूब हुई बच्चों की तस्करी

बचपन बचाओ आंदोलन ने अपने कार्यकर्ताओं की मदद से 24 मार्च से 2 सितंबर के बीच अलग-अलग ट्रेनों से 823 बच्चों को बचाया। 12 अगस्त से सितंबर के आखिर तक बचपन बचाओ आंदोलन ने ऐसी 78 बसों को पकड़वाया जिनमें 300 बच्चों की तस्करी की जा रही थी। कैलाश सत्यार्थी चिल्ड्रेन फाउंडेशन ने कम आमदनी वाले घरों और बच्चों पर लॉकडाउन के असर को लेकर एक रिपोर्ट बनाई। इसके लिए लॉकडाउन के दौरान प्रवासी मजदूरों की वापसी से प्रभावित राज्यों के 50 से ज्यादा गैर-सरकारी संगठनों और लगभग 250 परिवारों से बातचीत की गई। इसमें कहा गया कि इन राज्यों में श्रम कानूनों के कमजोर पड़ने से बच्चों की सुरक्षा पर आंच आएगी। इससे बाल मजदूरी के मामले बढ़ सकते हैं। रिपोर्ट में लॉकडाउन के बाद बच्चों की तस्करी बढ़ने का डर जताया गया। अध्ययन के दौरान लगभग 89 फीसदी गैर-सरकारी संगठनों ने डर जताया कि लॉकडाउन खत्म होने के बाद बड़ों के साथ बच्चों की तस्करी भी बढ़ सकती है। लगभग 76 फीसदी संगठनों ने कहा कि लॉकडाउन के बाद यौन व्यापार के लिए मानव तस्करी तेजी से बढ़ने का डर है। इनमें बच्चों की संख्या ज्यादा हो सकती है। गैर-सरकारी संगठनों ने लॉकडाउन के बाद बाल विवाह के मामले बढ़ने का भी डर जताया।

प्रदेश के गृह विभाग के मुताबिक जनवरी से नवंबर 2019 तक 11 महीने में राज्य से 7891 बच्चियां लापता हो गई हैं। इस हिसाब से हर महीने 700 से ज्यादा बच्चियां प्रदेश में गुम हो रही हैं। मानव तस्करी के खिलाफ लंबे समय से काम कर रहे सामाजिक कार्यकर्ता प्रशांत दुबे कहते हैं कि प्रदेश में हजारों मामले मानव तस्करी से जुड़े हैं लेकिन पुलिस उनको गुमशुदा मानती है। प्रकरण भी मानव तस्करी की जगह गुमशुदा का बनाया जाता है। मंडला, डिंडौरी, बालाघाट, खंडवा, सिवनी, हरदा और बैतूल वे जिले हैं जहां पर लगातार बच्चों की गुमशुदगी सामने आ रही है। सुप्रीम कोर्ट की गाइडलाइन है कि जो बच्चे चार माह तक बरामद न हों उन सभी मामलों को मानव तस्करी माना जाए। प्रदेश में इस गाइडलाइन का सही तरीके से पालन नहीं हो रहा। गुमशुदा के मामले सीआईडी दर्ज करती है और मानव तस्करी के महिला अपराध शाखा लेकिन दोनों विभागों में आपसी समन्वय की कमी है।

प्रदेश में पुलिस आधुनिकीकरण के लिए सरकार बड़ी राशि खर्च कर रही है। प्रदेश के साथ साथ केंद्र सरकार भी पुलिस सुधार के लिए लगातार फंड भेज रही है। सरकार इन मामलों को रोकने के लिए तकनीक का सहारा भी ले रही है। इसके बाद भी आंकड़ों में सुधार दिखाई नहीं दे रहा। साल 2016-17 में प्रदेश को केंद्र सरकार ने 25 करोड़ रुपए आवंटित किए जिनमें से 22 करोड़ रुपए खर्च किए गए। 2017-18 में 33 करोड़ रुपए आवंटित हुए जिनमें से 31 करोड़ रुपए खर्च किए गए। 2018-19 में केंद्र सरकार ने प्रदेश को 38 करोड़ रुपए जारी किए जो आधुनिकीकरण पर खर्च किए गए। गुमशुदा बच्चों का पता लगाने सरकार ने ट्रैक चाइल्ड और खोया-पाया पोर्टल भी विकसित किए हैं। लेकिन उसके बाद भी बच्चों की तस्करी पर अंकुश नहीं लग पा रहा है।

● रजनीकांत पारे

लोकपाल मात्र दिखावा!

कई कानूनी विसंगतियों में उलझा लोकपाल

सोशल एक्टिविस्टों का आरोप है कि जानबूझकर लोकपाल से जुड़े न्यायक्षेत्र और अन्य जरूरतों और कानूनी विसंगतियों को उलझाकर रखा गया है। सबसे बड़ा विवाद तो लोकपाल और सदस्यों के चयन से ही जुड़ा है। चयन समिति में सरकारी प्रतिनिधियों का बहुमत है, जो नहीं होना चाहिए था। मशहूर एक्टिविस्ट अंजलि भारद्वाज के मुताबिक चयन समिति में सरकारी प्रतिनिधियों का बहुमत नहीं होना चाहिए था लेकिन आखिरकार वही हुआ। क्या लोकपाल उस सरकार के खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोपों की छानबीन कर पाएगा जिसने नियुक्तियां की हैं? इसका परिणाम यह हो रहा है कि राजनीतिक और प्रशासनिक भ्रष्टाचार में इजाफा हो रहा है। ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल की जनवरी में जारी करप्शन परसेप्शन इंडेक्स में भारत 180 देशों की सूची में 80वें नंबर पर आया था। अगर पिछले 5 साल में इस सूचकांक के लिहाज से भारत का प्रदर्शन देखें, तो उसमें गिरावट ही आई है। ऐसे में यही लगता है कि लोकपाल और लोकायुक्त मात्र दिखावा बनकर रह गए हैं।

लोकपाल को 2019-20 में कुल 1,427 शिकायतें मिलीं, जिनमें से 613 राज्य सरकार के अधिकारियों से संबंधित थीं और चार शिकायतें केंद्रीय मंत्रियों तथा संसद सदस्यों के खिलाफ थीं। लोकपाल के अनुसार कुल शिकायतों में से 1,347 का निस्तारण किया गया। 1,152 शिकायतें लोकपाल के अधिकार क्षेत्र से बाहर की थीं। आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, लोकपाल को मिलीं 245 शिकायतें केंद्र सरकार के अधिकारियों के विरुद्ध, 200 सार्वजनिक उपक्रमों, वैधानिक इकाइयों, न्यायिक संस्थाओं तथा केंद्र स्तर की स्वायत्त संस्थाओं के खिलाफ, वहीं 135 शिकायतें निजी क्षेत्र के लोगों और संगठनों के विरुद्ध थीं। लोकपाल के आंकड़ों के अनुसार, 6 शिकायतें राज्य सरकारों के मंत्रियों और विधानसभा सदस्यों के खिलाफ थीं। इसमें कहा गया कि कुल शिकायतों में से 220 अनुरोध, टिप्पणियां, सुझाव थे। आंकड़ों के मुताबिक कुल 78 शिकायतों को निर्दिष्ट प्रारूप में दाखिल करने की सलाह दी गई।

गौरतलब है कि लोकपाल सार्वजनिक पदाधिकारियों के खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोपों में जांच करने वाली शीर्ष संस्था है। केंद्र सरकार ने इस साल मार्च में लोकपाल में शिकायत दाखिल करने का एक प्रारूप अधिसूचित किया था। इसके अधिसूचित किए जाने से पहले लोकपाल को किसी भी प्रारूप में मिली सभी शिकायतों की छानबीन की जाती थी। यानी हीलाहवाली का यह आलम रहा कि लोकपाल की नियुक्ति के करीब 11 महीने बाद सरकार ने शिकायत दर्ज कराने को लेकर नियम जारी किए थे।

आपको याद दिला दें कि राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद ने पिछले साल 23 मार्च को न्यायमूर्ति पिनाकी चंद्र घोष को लोकपाल के प्रमुख के रूप में शपथ दिलाई थी। लोकपाल के 8 सदस्यों को न्यायमूर्ति घोष ने 27 मार्च को पद की शपथ दिलाई थी। हालांकि लोकपाल के सदस्य न्यायमूर्ति अजय कुमार त्रिपाठी का इस साल मई में निधन हो गया। एक अन्य सदस्य न्यायमूर्ति दिलीप बी भोसले ने इस साल जनवरी में पद से इस्तीफा दे दिया था। नियमों के अनुसार, लोकपाल में एक अध्यक्ष और अधिकतम 8 सदस्यों के होने का प्रावधान है।

देश को बहुप्रतीक्षित लोकपाल मिले एक वर्ष से ज्यादा हो गया है और लोकपाल के समक्ष शिकायत करने का तय प्रारूप जारी हुए भी करीब 6 महीने बीत रहे हैं, लेकिन अभी तक लोकपाल के पास अपनी जांच विंग नहीं है। लोकपाल कानून के मुताबिक निदेशक जांच और निदेशक अभियोजन के पदों पर नियुक्ति नहीं हुई है। ये पद अभी तक खाली हैं। आपको ध्यान होगा देश में राजनीतिक और प्रशासनिक भ्रष्टाचार मिटाने और केंद्र में लोकपाल के गठन की मांग के लिए हुए विभिन्न आंदोलनों के क्रम में 2011 का जंतर-मंतर और फिर रामलीला मैदान का अन्ना हजारे आंदोलन सबसे ज्यादा सुर्खियों में रहा था। एक लंबे हाहाकारी आंदोलन, कैंडल, जुलूस, टोपी, तख्ती और तत्कालीन यूपीए सरकार की विदाई के बावजूद देश में लोकपाल हो या राज्यों में लोकायुक्त, उन्हें लेकर शासन व्यवस्था अब भी नकार मुद्रा से बाहर नहीं निकली है, जबकि इस पूरे आंदोलन को एक दशक बीतने को है।

ऐसे में इस आंदोलन से आखिर क्या हासिल हुआ, ये सवाल लगातार गहरा होता जा रहा है। आपको यह भी बता दें कि बीते 16 सितंबर को गोवा के लोकायुक्त के पद से सेवानिवृत्त होने के बाद जस्टिस प्रफुल्ल कुमार मिश्रा (सेवानिवृत्त) ने राज्य सरकार के व्यवहार पर असंतुष्टि जताते हुए कहा कि लोकायुक्त के रूप में उनके करीब साढ़े चार साल के कार्यकाल के दौरान लोक अधिकारियों के खिलाफ उन्होंने जो 21 रिपोर्ट सौंपी राज्य सरकार ने उनमें से किसी एक पर भी कार्रवाई नहीं की।

जस्टिस मिश्रा ने कहा, 'यदि आप मुझसे एक वाक्य में गोवा में लोकायुक्त के रूप में इन शिकायतों से निपटने का मेरा अनुभव पूछते हैं तो मैं कहूंगा कि उन्हें लोकायुक्त की संस्था को खत्म कर देना चाहिए।' उन्होंने कहा, 'जनता के पैसे को बिना किसी काम के खर्च क्यों किया जाना चाहिए? यदि लोकायुक्त अधिनियम को इस तरह की ताकत के साथ कूड़ेदान में डाला जा रहा है, तो लोकायुक्त को समाप्त करना बेहतर है।' 73 वर्षीय मिश्रा ने 18 मार्च, 2016 से 16 सितंबर, 2020 तक गोवा के लोकायुक्त के पद पर काम किया। उन्होंने जिन लोक अधिकारियों के खिलाफ उन्होंने कार्रवाई की सिफारिश की उनमें पूर्व मुख्यमंत्री से लेकर मौजूदा विधायक तक शामिल हैं। लगभग ऐसा ही देश के हर राज्य में हैं। केंद्र समेत 20 से अधिक राज्यों में लोकपाल और लोकायुक्त की नियुक्ति तो कर दी है यह लेकिन उनकी सिफारिशों को नजरअंदाज कर दिया जाता है।

● **प्रवीण कुमार**

सोयाबीन बीज का बढ़ेगा संकट

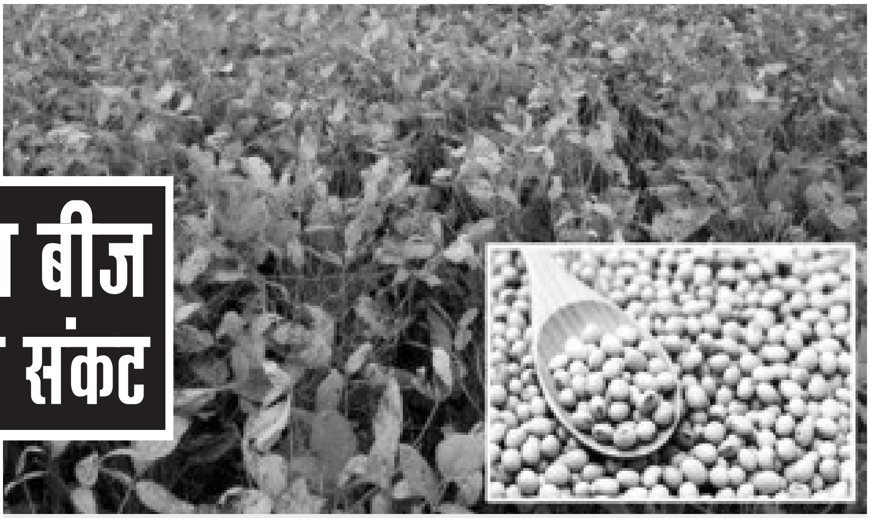

पीले सोने की चमक काली पड़ी

कृषि विभाग से मिले आंकड़ों के अनुसार प्रदेश में इस बार रिकार्ड 58.46 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में सोयाबीन की बोवनी हुई थी। इस कारण उम्मीद जताई जा रही थी कि गेहूं की तरह सोयाबीन की भी बंपर पैदावार होगी, लेकिन नकली बीज, अतिवृष्टि, वायरस और कीटों के प्रकोप ने उम्मीदों पर पानी फेर दिया। पीला सोना कहलाने वाली सोयाबीन न सिर्फ काली पड़ गई बल्कि दाना भी सिकुड़ गया। इस कारण न्यूनतम 2000 और अधिकतम 3650 रुपए क्विंटल ही भाव मिल पा रहे हैं। राजधानी भोपाल में कृषि विभाग के क्राप कटिंग (फसल कटाई प्रयोग) में प्रति हैक्टेयर 50 किलो से दो क्विंटल तक पैदावार हुई है, जबकि अनुकूल स्थिति होने पर प्रति हैक्टेयर 10 से 15 क्विंटल तक सोयाबीन फसल होती है। कोरोना संक्रमण से जूझ रहे किसानों को सोयाबीन की कम पैदावार ने बड़ी आर्थिक चोट मारी है। भोपाल के अलावा सीहोर, शाजापुर, आगर, राजगढ़, उज्जैन, देवास आदि जिलों में भी यही स्थिति है। मंडियों में सोयाबीन बेचने के लिए आने वाले किसानों के आंसू निकल रहे हैं। उनकी पीड़ा यह है कि कर्ज लेकर सोयाबीन की बुआई की थी, किंतु पैदावार इतनी भी नहीं हुई है कि लागत निकल जाए। ऐसे में रबी फसल के लिए फिर से कर्ज के बोझ तले दबना पड़ेगा।

देश को 60 फीसदी सोयाबीन उत्पादन देने वाले मप्र में इस बार नकली बीज और मौसम की मार से पीले सोने की पैदावार 65 फीसदी गिरी है। इससे प्रदेश के किसानों को बड़ी चपत लगी है। वहीं इस बात का संकेत भी है कि सोयाबीन बीज का संकट फिर बढ़ेगा। इस कारण किसानों को एक बार फिर से नकली बीज माफिया का शिकार होना पड़ेगा। कृषि विशेषज्ञों के अनुसार, सोयाबीन की फसल को सबसे अधिक नकली बीजों से नुकसान पहुंचा है। इस बार प्रदेश की कंपनियों ने बड़ी मात्रा में सोयाबीन का नकली बीज खपाया है। इस कारण जहां खेती का रकबा घटा है, वहीं पैदावार भी घटी है। उधर, कंपनियां नकली बीज बेचकर मालामाल हो गई हैं।

गौरतलब है कि प्रदेश में 144.6 लाख हैक्टेयर में खरीफ बुआई का लक्ष्य रखा गया था। जिसमें 60 लाख हैक्टेयर में सोयाबीन की बुआई होनी थी। लेकिन 58.46 लाख हैक्टेयर ही बोवनी हो पाई। लेकिन मौसम की बेरूखी और नकली बीज-खाद की मार से फसल तबाह हो गई। जिससे उत्पादन में गिरावट आई है। ज्यादातर किसान अगले वर्ष के लिए बीज संकट की स्थिति को भांप रहे हैं। सोयाबीन प्रमुख रूप से मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, तेलंगाना, राजस्थान और कर्नाटक में पैदा होती है। मध्यप्रदेश के सीहोर जिले में किसान प्रवीण परमार बताते हैं कि उन्होंने कुल 5 एकड़ में सोयाबीन की खेती की थी। अनियमित वर्षा ने उनकी फसलों को बर्बाद कर दिया। एक एकड़ में जहां पांच क्विंटल तक सोयाबीन की उम्मीद लगाकर बैठे थे, वहीं उन्हें एक एकड़ में सिर्फ एक क्विंटल सोयाबीन मिली है। इस वक्त वे खेतों को खाली करा रहे हैं।

प्रवीण परमार बताते हैं कि इस वक्त व्यापारी 2000 रुपए से 2200 रुपए तक ही प्रति क्विंटल सोयाबीन का दाम तय कर रहा है। कृषि बिल के हिसाब से मैं अपनी लागत और फायदे को जोड़ भी दूं तो सोयाबीन कौन खरीदेगा। एक एकड़ में करीब 11 हजार रुपए की लागत लगी है, जब प्रति क्विंटल 3000 रुपए से अधिक दाम वाली सोयाबीन एक एकड़ में कम से कम चार क्विंटल होती तो मेरी लागत निकलती लेकिन मौजूदा रेट भी बेहद कम है और सोयाबीन पांच एकड़ में महज पांच क्विंटल हुई है। इन्हें बीज के लिए रखा जा सकता है। क्योंकि कुछ बीज पिछली बार खरीदी थी लेकिन वे फेल हो गईं।

परमार कहते हैं कि किसानों की सोसाइटी सरकारी बीज मुहैया जरूर कराती है लेकिन वह 6700 रुपए के करीब मिलती है, जबकि हम सभी किसान आपस में ही बातचीत करके 4000 रुपए तक बीज की व्यवस्था कर लेते हैं। इस बार फसल हुई नहीं तो बीजों का संरक्षण भी कम होगा, ऐसे में बीज की किल्लत तो बनेगी, हो सकता है महंगा बीज भी खरीदना पड़े। जुलाई-अगस्त के अंत तक असयम वर्षा ने सोयाबीन के किसानों को खूब परेशान किया। सितंबर के शुरुआती दिनों में इंदौर की मंडी में पहुंचने वाले सोयाबीन में नमी का हिस्सा तय मानक से काफी ज्यादा था, वहीं अब जब पूरी तरह से सोयाबीन के मंडी में पहुंचने का वक्त है तब मंडी के व्यापारी आंदोलन पर हैं। कृषि से जुड़े आर्थिक मामलों के जानकार बताते हैं कि सामान्य वर्षा के अनुमान के कारण इस वर्ष भारत में सोयाबीन का रकबा भी बढ़ा था। 2019-20 में भारत में 113.98 लाख हैक्टेयर (281.65 हैक्टेयर) क्षेत्र में सोयाबीन बोई गई जबकि बीते वर्ष की समान अवधि में 110.71 लाख हैक्टेयर ही सोयाबीन क्षेत्र था।

महाराष्ट्र के वासिम जिले में सचिन कुलकर्णी बताते हैं कि उनके जिले में सोयाबीन की बंपर पैदावार होती है लेकिन इस बार वर्षा ने फसल चौपट कर दिया है। किसान पहले ही कोरोना संक्रमण की मार से परेशान था और अब इतनी भी फसल नहीं है कि बीजों का सही से संरक्षण हो सके। इसका असर अगले साल जरूर होगा। बीज काफी महंगी हो जाएंगी।

भारत दुनिया में सोयाबीन उत्पादन में चौथा स्थान रखता है। 2020-21 में दुनिया में कुल 36.44 करोड़ टन सोयाबीन उत्पादन का अनुमान लगाया गया था। वहीं, सोयाबीन उत्पादन को लेकर सरकार के तीसरे एडवांस अनुमान (2019-2020) के मुताबिक 1.22 करोड़ टन उत्पादन का अनुमान आंका गया था जबकि बीते वित्त वर्ष में 1.32 करोड़ टन उत्पादन हुआ था। वहीं, अब विशेषज्ञ इस अनुमान से कम उत्पादन का अंदाजा लगा रहे हैं। भारत सोयाबीन का निर्यात ऑस्ट्रेलिया, ऑस्ट्रिया, बहरीन, बांग्लादेश, बेल्जियम, मैयोटे, भूटान, ब्रुनेई, बुल्गारिया और कंबोडिया को करता है।

खरीफ सीजन की बुवाई के समय हुई 'अच्छी' बारिश से यह उम्मीद लगाई जा रही थी कि इस बार अच्छी फसल होगी, लेकिन जब फसल पकने लगी या पक कर तैयार हुई, उस समय हुई बेमौसमी बारिश ने इन उम्मीदों पर पानी फेर दिया। खरीफ सीजन 2020-21 का पहला अनुमान बताता है कि ज्यादातर फसलों का उत्पादन पिछले साल के मुकाबले कम भी रह सकता है।

● **श्याम सिंह सिकरवार**

नई बीमारियों की दस्तक

चीन में मिला फिर नई बीमारी का केस

कोरोना वायरस फैलने की शुरुआत में कुछ रिपोर्ट्स ऐसी आई थीं, जिनमें कहा गया था कि कोरोना वायरस चीन से फैला। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप और कुछ अन्य देशों के नेताओं ने भी यह बात कही थी। ट्रंप ने तो कई बार दावे किए थे कि कोरोना वायरस चीन ने ही फैलाया, क्योंकि उसके वुहान शहर की लैबोरेट्री में इस वायरस को पैदा किया गया और वह लीक होने से दुनियाभर में तबाही मचा रहा है। कई प्रमाण भी ऐसे मिले, जिसमें चीन पर संदेह भी गया, लेकिन चीन ने इसे सिरे से नकार दिया और जांच नहीं होने दी। लेकिन अब फिर पिछले दिनों चीन के इनर मंगोलिया स्वायत्त क्षेत्र के शहर में नए तरह के बुखार ब्यूबॉनिक प्लेग का मामला सामने आया है।

हमारा वातावरण इतना दूषित हो चुका है कि आने वाले समय में लोगों का जीना और भी मुश्किल होने वाला है। यह बात कई वैज्ञानिक, अनुभवी लोग और चिकित्सा विशेषज्ञ कह चुके हैं। पिछले दिनों एक रिसर्च सामने आई, जिसमें लिखा था कि हवा में हर समय सूक्ष्म कीटाणु तैरते रहते हैं, जिनमें कई विषाणु और रोगाणु होते हैं। ये रोगाणु और विषाणु मौसम दर मौसम पनपते रहते हैं और हमें प्रभावित करते रहते हैं। इनमें सैकड़ों रोगाणु और विषाणु ऐसे हैं, जो किसी भी मौसम में नहीं मरते और हम इंसानों पर हमेशा हमला करते रहते हैं। इनसे बचने का सबसे अच्छा तरीका स्वस्थ्य रहना है।

बाल रोग विशेषज्ञ डॉ. धवल कहते हैं कि कोरोना वायरस ने हम सबकी मास्क पहनने की आदत डाल दी। कुछ लोग इसे मुसीबत की जड़ या झंझट समझते हैं, लेकिन उन्हें यह बात नहीं मालूम कि केवल मास्क से वे कई बीमारियों से बच रहे हैं। यहां तक कि अगर वे लगातार मास्क का इस्तेमाल करते हैं, तो उनमें खांसी-जुकाम और दमा के साथ-साथ श्वास के अन्य रोगों के होने की संभावना कम हो जाएगी। यह तो बीमारियों के फैलने और उनसे बचने का आम तरीका है, लेकिन इस समय की बात करें, तो हर कोई इन दिनों महामारी की तरह फैली कोरोना वायरस नाम की खतरनाक बीमारी से घबराया हुआ है। अब एक और बुरी खबर यह है कि जबसे कोरोना वायरस की महामारी फैली है, तबसे अब तक कई नई बीमारियों की भी पुष्टि हो चुकी है।

हालांकि इन नई बीमारियों पर उतना हो-हल्ला नहीं हुआ है, क्योंकि यह कोरोना वायरस की तरह खतरनाक नहीं पाई गई हैं। लेकिन अगर चिकित्सा विशेषज्ञों की मानें, तो अभी और भी नई बीमारियां पनप सकती हैं, जिनमें कुछ कोरोना वायरस की तरह जानलेवा और खतरनाक हो सकती हैं। वैसे पिछले दिनों इस तरह की कई अफवाहें भी फैली थीं कि अब कोरोना से भी खतरनाक बीमारी आने वाली है, जिससे गांव के गांव और शहर के शहर समाप्त हो जाएंगे। डॉ. धवल कहते हैं कि हमें अफवाहों पर ध्यान नहीं देना चाहिए, लेकिन अपनी सुरक्षा पर पूरा ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि आने वाला समय बहुत नाजुक है। डॉ. धवल कहते हैं कि कोई बीमारी भले ही वह कितनी भी छोटी हो, अगर उसका समय पर इलाज नहीं कराया जाए, तो वह बड़ी चुनौती हो सकती है और जान भी ले सकती है। इसलिए हर बीमारी को जानलेवा ही मानना चाहिए और शुरुआत में ही बीमारी के लक्षण पता चलते ही सही डॉक्टर से उसकी जांच कराकर इलाज कराना चाहिए।

अगर नई बीमारियों की बात करें, तो इन दिनों अमेरिका और यूरोपीय देशों के बच्चों में एक अजीब तरह की बीमारी, जिसमें बच्चे के दोनों पैरों पर लाल-लाल दाने निकल आते हैं और पूरे शरीर में सूजन आ जाती है, तेजी से पनप रही है। अमेरिका और यूरोपीय देशों में पनपी यह बीमारी कोरोना वायरस से जुड़ी है, जिसमें कोरोना वायरस के जुड़े हाइपर इन्फ्लेमेटरी सिंड्रोम पाए गए हैं। चिकित्सा रिपोर्ट्स की मानें तो इस रहस्यमयी बीमारी ने अब तक कई बच्चों की जान ले ली है। अब इस बीमारी ने भारत में भी दस्तक दे दी है। पिछले दिनों चेन्नई के एक 8 वर्षीय बच्चे में कोरोना वायरस से जुड़े हाइपर-इन्फ्लेमेटरी सिंड्रोम के लक्षण पाए गए। भारत में इस सिंड्रोम का यह पहला मामला है। माना जा रहा है कि इस नई बामारी से बच्चों की जान जाने का खतरा रहता है।

पिछले दिनों कोरोना वायरस से संक्रमित इस बच्चे को चेन्नई के कांची कामकोटि चाइल्डस ट्रस्ट हॉस्पिटल में भर्ती कराया गया, जहां बीमार बच्चे को आईसीयू में रखा गया। इस बच्चे के शरीर में उत्पन्न होने वाले विषाक्त पदार्थों के अलावा कावासाकी बीमारी के लक्षण मिले थे। डॉ. धवल से इस बीमारी के बारे में पूछने पर उन्होंने बताया कि इस बीमारी में बच्चों की रक्त वाहिकाओं में सूजन आ जाती है, जिससे उसके शरीर में सूजन आ जाती है और बच्चे धीरे-धीरे निढाल हो जाते हैं।

डॉ. धवल का कहना है कि इस बीमारी के बारे में अभी मैं भी ठीक से नहीं जान पाया हूं, लेकिन जरूरी है कि बच्चों की हर बीमारी के बारे में मैं ज्यादा से ज्यादा जान सकूं और उसका सही इलाज कर सकूं। इस बीमारी के बारे में मैं जहां तक जान पाया हूं, तो यह कि यह कोरोना वायरस के लक्षण वाली बीमारी है, जिसमें बच्चे के अंदर सेप्टिक शॉक के साथ निमोनिया, कोविड-19 पेनुमोनिटिस, कावासाकी रोग और विषाक्त शॉक सिंड्रोम के लक्षण पाए जा सकते हैं। डॉ. धवल की बात सही पाई गई, चेन्नई के बीमार बच्चे के शरीर में बीमारी के यही लक्षण मिले थे। हालांकि अच्छी बात यह है कि इस बच्चे को कुछ दवाओं की मदद से काफी हद तक ठीक कर दिया गया। लेकिन बच्चे को कोई दिक्कत होने पर उसकी स्वास्थ्य जांचें अभी भी की जा सकती हैं, यह सलाह चिकित्सकों द्वारा बच्चे के परिजनों को दी जा चुकी हैं।

● **धर्मेन्द्र सिंह कथूरिया**

निजी कंपनियों के हवाले वन

करोड़ों रुपए कमाना ही निजी क्षेत्र का एकमात्र उद्देश्य

विभिन्न नीति एवं कानून के कारण भारत का वन अब तक वैश्विक कार्बन व्यापार में बड़े पैमाने पर नहीं आया है। कई ऐसे गैर सरकारी संगठन हैं जो विश्व बैंक द्वारा पोषित हैं, वे अपने दस्तावेजों में यह कहते हुए नहीं अघाते कि भारत के जंगलवासी समुदाय (आदिवासी प्रमुख रूप से) कार्बन व्यापार परियोजना से लाभान्वित हो सकेंगे। सिन्हा बताते हैं कि ये संगठन आदिवासियों के बारे में रंगीन व्याख्या कर प्रेरित करते हैं कि उनकी हालत रातों-रात सुधर जाएगी। वहीं, इस संबंध में सीधी जिले के पूर्व वन अधिकारी चंद्रभान पांडे बताते हैं कि कैसे आदिवासी कार्बन व्यापार की जटिलता को समझकर कार्बन भावताव को समझेगा? वह कहते हैं कि कार्बन व्यापार के जरिए (वनीकरण करके) अंतर्राष्ट्रीय बाजार से करोड़ों रुपए कमाना ही एकमात्र उद्देश्य निजी क्षेत्र का होगा। वह कहते हैं कि अंत में स्थानीय समुदाय अपने निस्तारी जंगलों से बेदखल हो जाएगा और शहरों में आकर मजूरी कर स्लम बस्तियों की संख्या बढ़ाएगा। एक तरह से सरकार ही अपनी नीतियों के माध्यम से आदिवासियों को उनकी जमीन से विस्थापित कर किसान से मजदूर बनने पर मजबूर कर रही है।

भारत सरकार हो या राज्य सरकारें, हर वक्त उनका एक ही नारा होता है आदिवासियों का कल्याण। लेकिन उनका कल्याण करते-करते ये सरकारें अक्सर उनको उनके गांव-खेत-खलिहान और उनके जंगलों से बेदखल कर देती हैं। इसका ताजा उदाहरण मप्र का है। यहां जलवायु परिवर्तन से होने वाले दुष्प्रभावों को कम करने, राज्य के जंगलों की परिस्थितिकीय में सुधार करने और आदिवासियों की आजीविका को सुदृढ़ करने के नाम पर राज्य के कुल 94,689 लाख हैक्टेयर वन क्षेत्र में से 37,420 लाख हैक्टेयर क्षेत्र को निजी कंपनियों को देने का निर्णय लिया गया है। इस संबंध में मप्र के सतपुड़ा भवन स्थित मुख्य प्रधान वन संरक्षक द्वारा अधिसूचना जारी की गई है। इस संबंध में भोपाल के पर्यावरणविद सुभाष पांडे ने बताया, राज्य के आधे से अधिक बिगड़े वन क्षेत्र को सुधारने के लिए जंगलों की जिस क्षेत्र को अधिसूचित किया गया है, वास्तव में वहां आदिवासियों के घर-द्वार, खेत और चारागाह हैं। इसे राज्य सरकार बिगड़े वन क्षेत्र की संज्ञा देकर निजी क्षेत्रों को सौंपने जा रही है।

ध्यान रहे कि इस प्रकार के बिगड़े जंगलों को सुधारने के लिए राज्य भर के जंगलों में स्थित गांवों में बकायदा वन ग्राम समितियां बनी हुई हैं और इसके लिए वन विभाग के पास बजट का भी प्रावधान है। इस संबंध में राज्य के वन विभाग के पूर्व सब डिविजन ऑफिसर संतदास तिवारी ने बताया कि जहां आदिवासी रहते हैं तो उनके निस्तार की जमीन या उनके घर के आसपास तो हर हाल में जंगल नहीं होगा। आखिर आप अपने घर के आसपास तो जंगल या पेड़ों को साफ करेंगे और मवेशियों के लिए चारागाह भी बनाएंगे। अब सरकार इसे ही बिगड़े हुए जंगल बताकर अधिग्रहण करने की तैयारी है। जबकि राज्य सरकार का तर्क है कि बिगड़े हुए जंगल को ठीक करके यानी जंगलों को सघन बनाकर ही जलवायु परिवर्तन और परिस्थितिकीय तंत्र में सुधार संभव है। इस संबंध में मप्र में वन क्षेत्रों पर अध्ययन करने वाले कार्यकर्ता राजकुमार सिन्हा ने बताया कि मप्र की सरकार ने 37 लाख हैक्टेयर बिगड़े वन क्षेत्रों को पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशीप (पीपीपी) मोड पर निजी कंपनियों को देने का निर्णय लिया है। वह कहते हैं कि यह कौन सा वन क्षेत्र है? इसे जानने और समझने की जरूरत है। प्रदेश के कुल 52,739 गांवों में से 22,600 गांव या तो जंगल में बसे हैं या फिर जंगलों की सीमा से सटे हुए हैं। मप्र के जंगल का एक बड़ा हिस्सा आरक्षित वन है और दूसरा बड़ा हिस्सा राष्ट्रीय उद्यान, अभयारण्य, सेंचुरी आदि के रूप में जाना जाता है। शेष क्षेत्र को बिगड़े वन या संरक्षित वन कहा जाता है। इस संरक्षित वन में स्थानीय लोगों के अधिकारों का दस्तावेजीकरण किया जाना है, अधिग्रहण नहीं। यह बिगड़े जंगल स्थानीय आदिवासी समुदाय के लिए बहुत महत्वपूर्ण आर्थिक संसाधन हैं, जो जंगलों में बसे हैं और जिसका इस्तेमाल आदिवासी समुदाय अपनी निस्तार जरूरतों के लिए करते हैं।

एक नवंबर, 1956 में मध्यप्रदेश के पुनर्गठन के समय राज्य का भौगोलिक क्षेत्रफल 442.841 लाख हैक्टेयर था, जिसमें से 172.460 लाख हैक्टेयर वनभूमि और 94.781 लाख हैक्टेयर सामुदायिक वनभूमि दर्ज थी। पांडे ने बताया कि उक्त संरक्षित भूमि को वन विभाग ने अपने वर्किंग प्लान में शामिल कर लिया, जबकि इन जमीनों के बंटाईदारों, पट्टेधारियों या अतिक्रमणकारियों को हक दिए जाने का कोई प्रयास नहीं किया गया। वह कहते हैं कि वन विभाग ने जिन भूमि को अनुपयुक्त पाया उसमें से कुछ भूमि 1966 में राजस्व विभाग को अधिक अन्न उपजाऊ योजना के तहत हस्तांतरित किया, वहीं अधिकतर अनुपयुक्त भूमि को वन विभाग ने 'ग्राम वन' के नाम पर अपने नियंत्रण में ही रखा। ध्यान रहे कि अभी इसी संरक्षित वन में से लोगों को वन अधिकार कानून 2006 के अंतर्गत सामुदायिक वन अधिकार या सामुदायिक वन संसाधनों पर अधिकार दिया जाने वाला है। सिन्हा सवाल उठाते हैं कि अगर ये 37 लाख हैक्टेयर भूमि उद्योगपतियों के पास होगी तो फिर लोगों के पास कौन सा जंगल होगा? पांचवीं अनुसूची के क्षेत्रों में पेसा कानून प्रभावी है जो ग्राम सभा को अपने प्राकृतिक संसाधनों पर नियंत्रण का अधिकार देता है। क्या पीपीपी मॉडल में सामुदायिक अधिकार प्राप्त ग्राम सभा से सहमति ली गई है? वन अधिकार कानून द्वारा ग्राम सभा को जंगल के संरक्षण, प्रबंधन और उपयोग के लिए जो सामुदायिक अधिकार दिया गया है उसका क्या होगा?

● राकेश ग्रोवर

मौत के रास्ते का विकास

झांसी से बाया खजुराहो, चित्रकूट से इलाहाबाद, नरैनी से कालिंजर सतना में बहुत से वृक्षों को काट दिया गया है। कई वृक्षों को काटे जाने हैं, उनकी छाती पर उनके कटने का नंबर लिख दिया गया है। हालांकि जिस काम के लिए वे काटे गए हैं, वह काम भी अधूरा पड़ा हुआ है। वृक्ष हमारे लिए प्राणवायु हैं, वे हमें जीने के लिए ऑक्सीजन देते हैं। हमें धूप, गर्मी और उष्णता से बचाते हैं। पेड़ वृक्ष बनते हैं और वर्षा लाते हैं। हमें फल, खाद्य पदार्थ, आवास और छाया देते हैं। जहरीली गैसों तथा प्राकृतिक आपदाओं-बाढ़, भूकंप, ग्लोबल वार्मिंग, सुनामी, मरुस्थलीकरण, सूखा, जलसंकट, अकाल, निर्वनीकरण, ज्वालामुखी विस्फोट और चक्रवाती तूफानों से रक्षा करते हैं। नदियों की कटान रोकते हैं। वृक्षों की वजह से कृषि कार्य में मदद मिलती है और मानव संपदा में वृद्धि होती है, यानी वृक्ष हमारे पर्यावरण के लिए आवश्यक हैं। हमारा पर्यावरण सुरक्षित रहेगा तो हम सुरक्षित रहेंगे। दुखद यह है कि हाल के दिनों में भौतिक विकास के नाम पर जगह-जगह वृक्षों को काटा जा रहा है। सैकड़ों-हजारों वर्षों से लगे लाखों वृक्षों के कटने से हमारा पर्यावरण गंभीर रूप से प्रभावित हो रहा है। वृक्ष हमें समुद्र मंथन में मिला। पृथ्वी सूत्र में लिखा है वृक्ष वर्षा लाते हैं। ऋषि-मुनि और पुरखे वृक्षों की पूजा करते रहे हैं।

सर्वोदय कार्यकर्ता और समाजसेवी उमा शंकर पांडेय का कहना है कि वृक्ष हमारे लिए देवता हैं। संसार का सुख उनमें समाहित है। वृक्ष हमसे कुछ लेते नहीं हैं, लेकिन वे हमें बहुत कुछ देते हैं। वे परोपकारी हैं। सनातन ग्रंथों में बताया गया है कि एक वृक्ष दस पुत्र के समान हैं। बांदा से सतना, झांसी से खजुराहो, इलाहाबाद, बांदा से कालिंजर की यात्रा के दौरान पांडेय ने देखा कि रोड बनाने के नाम पर सैकड़ों वर्ष पुराने वृक्षों को विकृत मानसिकता के साथ जिस तरह काटा गया है, वह आने वाले कई वर्षों तक मानव को चोट पहुंचाते रहेंगे। महुआ, आम, पीपल, बरगद, जामुन, शीशम के वृक्षों को काट डाला गया। यह विकास के नाम पर वृक्षों की कटाई नहीं हो रही है, बल्कि अपने विनाश के लिए मौत का रास्ता बना रहे हैं। पुराने वृक्षों की इस तरह कटाई देखकर शरीर कांप उठता है। पर्यावरण प्रेमियों ने इस पर गंभीर चिंता जताई है। जो वृक्ष काटे गए हैं, उन्हें फिर से लगाने और बड़े होने में 100 वर्ष से ज्यादा का समय लगेगा। चित्रकूट के वैद्य डॉ. सचिन उपाध्याय, खजुराहो डेवलपमेंट एसोसिएशन के अध्यक्ष सुधीर शर्मा, अजीत, दुर्ग कालिंजर के अरविंद, महोबा के राजीव तिवारी, बांदा के अरुण निगम, दीपक शुक्ला ने इसे विकास नहीं, विनाश की ओर प्रस्थान कहा है।

जिस चित्रकूट का वर्णन गोस्वामी तुलसीदास महाराज ने किया है, उसमें प्रभु श्रीराम को वन का राजा बताया है। वहां के हजारों ऋषि-मुनियों तीर्थ यात्रियों के वनगमन के दौरान स्वयं भगवान राम, माता सीता, भाई लक्ष्मण की शरण स्थली रही वृक्षों को निर्दयता के साथ काटा जा रहा है।

जिन गांवों में वृक्ष हैं, वहां का जलस्तर आज भी ऊपर

समाज के कुछ सहृदयी और मित्र बिना किसी प्रचार-प्रसार के पुराने वृक्षों को बचाने में लगे हैं। चित्रकूट के वैद्य डॉ. सचिन उपाध्याय कई वर्षों से वृक्षों पर शोध कर रहे हैं। महोबा के राजीव तिवारी सैकड़ों वर्ष पुराने बरगद को बचाने के लिए बरसों से जमीन पर काम कर रहे हैं। कालिंजर के अरविंद छिरौलिया आयुर्वेदिक पौधों को रोपण करते हैं। अरुण निगम राष्ट्रीय राजमार्ग के बीचों-बीच प्रतिवर्ष अपने संसाधन से पौधरोपण करते हैं। सुधीर शर्मा अपने संसाधन से राष्ट्रीय कला केंद्र खजुराहो में पौधरोपण करते हैं। डॉ. शिव पूजन ऋषि कुल के माध्यम से वृक्ष बचा रहे हैं। कई कलमकार साथी अपनी कलम के माध्यम से वृक्ष बचाने की कोशिश कर रहे हैं। कई अधिकारी अपने पैसों से हजारों वृक्ष लगाते हैं। कुछ लोग अभी जिंदा हैं, ऐसे कई नाम है जो आदर्श हैं, जमीन पर काम कर रहे हैं। वह अपनी मार्केटिंग करने के लिए नहीं, बल्कि नैतिक जिम्मेदारी मानते हुए इस काम में जुटे हैं। जिन गांवों में वृक्ष हैं, वहां का जलस्तर आज भी ऊपर है, जहां पर नहीं है, वहां जल नहीं है। जल ही जीवन है।

पोद्दार इंटर कॉलेज के सामने का शमी वृक्ष सैकड़ों वर्ष पुराना है। चित्रकूट से इलाहाबाद मार्ग पर बसे गांवों की तरफ चलेंगे तो हजारों पुराने वृक्ष कटे हुए पड़े हैं। विश्व प्रसिद्ध कालिंजर नरैनी से कालिंजर जाते समय दो हजार वृक्ष काटे गए हैं। वृक्षों की छाती पर नंबर लिख दिए गए हैं। पिछले वर्ष इन वृक्षों पर नंबर लिखे गए थे, इस वर्ष कट गए। क्या इसे विकास कहते हैं? दूसरे देशों में वृक्ष काटे नहीं जाते हैं, बल्कि उखाड़कर दूसरी जगह शिफ्ट कर दिए जाते हैं। लकड़ी काटने के नाम पर और पुरानी लकड़ी बेचने के नाम पर यहां वृक्ष काट दिए जाते हैं। वह लकड़ी कहां जाती है, उसका मूल्य क्या होता है, किसी को नहीं मालूम। जो विभाग जिम्मेदार है वह चुप है। वृक्षों को उखाड़ने के लिए जब करोड़ों रुपए की जेसीबी आ सकती है, तो वृक्षों को शिफ्ट करने के लिए मशीन क्यों नहीं मंगाई जा सकती है। पीपल को देव वृक्ष माना गया है। इसकी परिक्रमा से पाप मिटते हैं। भगवान बुद्ध ने पूरा ज्ञान और अद्भुत शक्ति इसी के नीचे बैठकर प्राप्त की। वास्तविकता यह है कि पेड़ पौधों की पूजा अर्चना वंदना एवं प्रार्थना के पीछे कर्मकांड नहीं, बल्कि इनके पीछे वैज्ञानिक तथ्य छिपे हुए हैं। भारतीय संस्कृति में वृक्षों की जितनी महिमा गरिमा का उल्लेख किया है, संभवत: किसी और देश में नहीं। पेड़-पौधों में अद्भुत शक्ति है, जिसका उल्लेख वेद उपनिषद, पुराणों, शास्त्रों, लोक विश्वासों, परंपराओं में समाहित है। वृक्षों को देवता मानकर उनकी पूजा उपासना की जाती है।

● **सिद्धार्थ पांडे**

उपचुनाव दांव पर 'राज'

कई मंत्रियों पर मंडरा रहा हार का खतरा

मप्र में 28 विधानसभा सीटों पर उपचुनाव कोई छोटा-मोटा उपचुनाव नहीं है बल्कि यह लिखेगा विधानसभा में सरकार की तकदीर। यह है सत्ता की असली लड़ाई। 230 सदस्यीय विधानसभा में सरकार बचाए रखने के लिए भाजपा को चाहिए 9 सीट जबकि सत्ता में वापसी के लिए कांग्रेस को जीतनी होंगी सभी 28 सीटें। यही नहीं इस उपचुनाव में शिवराज सिंह चौहान, ज्योतिरादित्य सिंधिया, कमलनाथ और दिग्विजय सिंह का राजनीतिक भविष्य भी दांव पर है।

● **राजेंद्र आगाल**

मप्र में 28 सीटों पर हो रहे बहुप्रतीक्षित उपचुनाव को महाउपचुनाव माना जा रहा है। वह इसलिए कि इस उपचुनाव में दांव पर राज (सरकार) है। यानी अगर कांग्रेस सभी सीटें जीतती है तो भाजपा को सत्ता छोड़नी होगी और भाजपा 9 से अधिक सीटें जीतती है तो उसकी सरकार बरकरार रहेगी। शह-मात के इस खेल में 1 वर्तमान तथा 2 पूर्व मुख्यमंत्रियों का राजनीतिक भविष्य भी दांव पर है। वैसे तो उपचुनाव में मुख्य मुकाबला भाजपा और कांग्रेस के बीच है, लेकिन करीब एक दर्जन सीटों पर त्रिकोणीय मुकाबले के हालात बने हुए हैं। जहां बसपा कई सीटों पर भाजपा और कांग्रेस की जीत का गणित बिगाड़ेगी, वहीं कई सीटों पर निर्दलीय प्रत्याशी हार-जीत में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे। ऐसे में सरकार बनाने के लिए 116 के जादुई आंकड़े को पाने के लिए भाजपा और कांग्रेस के नेता इस उपचुनाव में वह सभी हथकंडे अपना रहे हैं, जो शायद ही पूर्व में कभी अपनाए गए थे।

मप्र की 28 विधानसभा सीटों पर हो रहे उपचुनाव के लिए मतदान 3 नवंबर को और मतगणना बिहार के साथ ही 10 नवंबर को की जाएगी। यानी इस दिन तय हो जाएगा कि मप्र में शिवराज की सत्ता रहेगी या कांग्रेस के कमलनाथ वापसी करेंगे? इन 28 सीटों में 25 पर उपचुनाव होने की वजह कांग्रेस विधायकों का इस्तीफा देकर भाजपा ज्वाइन करना है, जबकि तीन सीटें विधायकों के निधन के बाद रिक्त हुई हैं। 25 में 22 विधायक सिंधिया खेमे से हैं, जिनके आने से शिवराज सरकार के गठन का रास्ता साफ हुआ था। हालांकि कांग्रेस इन विधायकों को गद्दार बताती है और इसी मुद्दे पर वह चुनावी मैदान में है। कांग्रेस अधिकतर सीटें जीतकर कमलनाथ की वापसी का दावा कर रही है, जमीनी हकीकत बिलकुल अलग है। वहीं भाजपा भी सभी सीटें जीतने का दम भर रही है।

चरम पर उपचुनाव का घमासान

मप्र में 28 विधानसभा सीटों पर हो रहे उपचुनाव का घमासान चरम पर पहुंच गया है। भाजपा, कांग्रेस, बसपा, सपा के प्रत्याशियों सहित कुल 355 प्रत्याशी मैदान में हैं। 3 नवंबर को 63 लाख 51 हजार 867 मतदाता 19 जिलों के 28 विधानसभा सीटों पर मतदान कर प्रत्याशियों का भाग्य लिखेंगे और 10 नवंबर को मतगणना के बाद जीत-हार की तस्वीर साफ हो जाएगी। उपचुनाव में किसकी जीत होगी और किसकी हार इस पर अभी तो कुछ नहीं कहा जा सकता, लेकिन एक बात तो तय है कि ज्योतिरादित्य सिंधिया और कमलनाथ का राजनीतिक भविष्य दांव पर है। अगर कांग्रेस सभी 28 सीटें जीतती है तो कमलनाथ फिर मुख्यमंत्री बनेंगे और प्रदेश की राजनीति में उनका दबदबा कायम होगा। अगर सिंधिया हारे तो उनका राजनीतिक कद सिमटकर रह जाएगा और शिवराज सिंह का दबदबा बना रहेगा।

गौरतलब है कि मप्र में हो रहा उपचुनाव दो नेताओं (कमलनाथ और सिंधिया) के अहम का परिणाम है। सिंधिया और उनके समर्थकों की बगावत के कारण ही ये उपचुनाव हो रहे हैं। देश के इतिहास में पहली बार किसी राज्य की 28 विधानसभा सीटों पर उपचुनाव हो रहे हैं। इसलिए इसे मिनी विधानसभा चुनाव भी कहा जा रहा है। इस चुनाव में भले ही 355 प्रत्याशी मैदान में हैं, लेकिन भाजपा नेता ज्योतिरादित्य सिंधिया का सबकुछ तो पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ का मप्र में राजनीतिक भविष्य दांव पर लगा है। जिन 28 सीटों पर उपचुनाव हो रहा है, 2018 में उनमें से 27 पर कांग्रेस के विधायक विजयी हुए थे। इसलिए ज्योतिरादित्य और कमलनाथ के बाद कांग्रेस में भी बैचेनी है। एक तरफ जहां भाजपा संगठित तौर पर सक्रिय नजर आ रही है, वहीं कांग्रेस में एकमात्र कमलनाथ सक्रिय हैं।

संकल्प-पत्र बनाम वचन-पत्र

मप्र में 28 सीटों पर हो रहे विधानसभा उपचुनाव के लिए भाजपा और कांग्रेस ने अपना घोषणा-पत्र जारी कर दिया है। भाजपा ने अपने घोषणा-पत्र को संकल्प-पत्र का नाम दिया है, तो कांग्रेस ने वचन-पत्र। कांग्रेस के वचन-पत्र में 52 वादे किए गए हैं। जिनमें 100 रुपए में 100 यूनिट बिजली। किसानों का कर्जा माफ करने की घोषणा। कर्मचारी, आदिवासी, उद्योग, व्यापार, रोजगार, युवाओं, महिला, सामाजिक न्याय और सुरक्षा में किसानों के मुद्दे पर बड़े ऐलान। शुद्ध के लिए युद्ध अभियान चलाने का जिक्र। सामाजिक सुरक्षा पेंशन की राशि बढ़ाने का ऐलान। महिला स्व सहायता समूहों को 5 लाख तक का लोन देने की घोषणा। कोरोना से मरने वालों को पेंशन। किसान बिल नहीं लागू करने का वचन। किसानों की उपज समर्थन मूल्य पर खरीदने का ऐलान। वहीं, भाजपा ने अपने संकल्प-पत्र में मुफ्त कोरोना वैक्सीन देने के वादे के अलावा स्थानीय मुद्दों के लिए संकल्प-पत्र में अलग से एक कॉलम। किसानों के लिए सरकार की योजनाओं का जिक्र। 0 प्रतिशत ब्याज पर फसल बीमा योजना फिर से शुरू करने का ऐलान। सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना के तहत लगभग 45,17,000 हितग्राहियों के खातों में 1,988 करोड़ रुपए की पेंशन राशि जमा कराई गई। गरीबों के लिए संबल योजना। प्रधानमंत्री मोदी ने दोबारा शुरू की गई किसान सम्मान निधि के तहत किसानों के खाते में आएंगे 10 हजार सालाना। राशन कार्ड वाले 37 लाख गरीब परिवारों को खाद्यान्न पर्ची के जरिए नियमित राशन। 6000 करोड़ की लागत से 310 किलोमीटर लंबे चंबल के बीहड़ में चंबल प्रोग्रेस-वे का निर्माण जैसे कई वादे किए हैं। किसके वादे में कितना दम है, यह तो 10 नवंबर को साफ होगा।

बसपा और वोटकटवा चुनौती

इस महाउपचुनाव में भाजपा और कांग्रेस के लिए सबसे बड़ी चुनौती बसपा प्रत्याशियों के साथ ही वोटकटवा उम्मीदवार भी हैं। सभी 28 सीटों पर बड़ी संख्या में दोनों पार्टियों से नाराज प्रत्याशी मैदान में हैं। इस कारण दोनों पार्टियों को इस बात का डर सता रहा है कि अगर समय रहते वोटकटवा उम्मीदवारों को मनाया नहीं गया तो जीत का गणित बिगड़ सकता है। दरअसल, कोरोना संक्रमण के कारण आशंका जताई जा रही है कि उपचुनाव में 40 से 45 प्रतिशत मतदान बमुश्किल हो पाएगा। ऐसे में वोटकटवा उम्मीदवार भाजपा और कांग्रेस के नेताओं की जीत का गणित बिगाड़ सकते हैं। 2018 में इन 28 सीटों पर वोटकटवा उम्मीदवारों को करीब 3,75,000 वोट मिले थे, अब उपचुनाव में यही वोट जीत-हार तय करेंगे। इसलिए भाजपा और कांग्रेस दोनों इस कोशिश में लगी हुई हैं कि मतदान से पहले किसी तरह वोटकटवा उम्मीदवारों को अपने समर्थन में चुनावी मैदान से हटा लिया जाएगा।

प्रदेश में अब तक के चुनाव में कांग्रेस और भाजपा में सीधा मुकाबला होता रहता है। लेकिन बसपा, सपा, निर्दलीय और अन्य पार्टियों के प्रत्याशी कांग्रेस-भाजपा की जीत के गणित को बिगाड़ते रहते हैं। अत: इस बार के उपचुनाव में दोनों पार्टियों की **नजर वोटकटवा उम्मीदवारों** पर है। गौरतलब है कि उपचुनाव शिवराज सरकार के स्थायित्व और कांग्रेस की नई उम्मीदों से जुड़ा है। यही वजह है कि एक-एक सीट पर जीत सुनिश्चित करने के लिए दोनों दल बिसात बिछा रहे हैं। सपा सहित निर्दलीय उम्मीदवारों को चुनाव मैदान से हटने के लिए तरह-तरह के प्रलोभन दिए जा रहे हैं। सपा के साथ ही कुछ निर्दलीय प्रत्याशी मैदान छोड़ भी चुके हैं। उम्मीद की जा रही है कि अभी और मैदान छोड़ेंगे।

बसपा बिगाड़ेगी गणित

मप्र में बसपा भाजपा और कांग्रेस का खेल खराब करने की रणनीति पर काम कर रही है। उपचुनाव की 28 में से 27 सीटों पर बसपा ने प्रत्याशी उतारे हैं। इनमें से 16 सीटें ग्वालियर-चंबल क्षेत्र की हैं, जहां पहले से ही बसपा का प्रभाव ज्यादा है। 2018 के विधानसभा चुनाव में बसपा को जिन दो सीटों पर जीत मिली थी, वे भी इसी क्षेत्र की हैं। इसके अलावा कई सीटों पर उसके उम्मीदवार दूसरे नंबर पर रहे थे। बसपा के कारण अधिकांश सीटों पर त्रिकोणीय मुकाबला हो रहा है। 2018 के विधानसभा चुनाव में ग्वालियर-चंबल संभाग की 15 सीटों पर बसपा को निर्णायक वोट मिले थे। दो सीटों पर उसके प्रत्याशी दूसरे नंबर पर रहे, जबकि 13 सीटों पर बसपा प्रत्याशियों को 15 हजार से लेकर 40 हजार तक वोट मिले थे। ग्वालियर-चंबल की जिन सीटों पर उपचुनाव होने वाले हैं, उनमें से मेहगांव, जौरा, सुमावली, मुरैना, दिमनी, अंबाह, भांडेर, करैरा और अशोकनगर में पहले बसपा जीत दर्ज कर चुकी है। 2018 में मुरैना में भाजपा प्रत्याशी की हार में बसपा की मौजूदगी प्रमुख कारण था। इसके अलावा पोहरी, जौरा, अंबाह में बसपा के चलते भाजपा तीसरे नंबर पर पहुंच गई थी। उसकी मौजूदगी से इनमें से अधिकांश सीटों पर उपचुनावों में भी मुकाबला त्रिकोणीय होता दिख रहा है।

नाथ बनाम शिव की लड़ाई

ये उपचुनाव ज्योतिरादित्य सिंधिया के कारण हो रहे हैं। इसलिए माना जा रहा था कि इस चुनावी मैदान में सिंधिया के इर्द-गिर्द पूरा माहौल रहेगा। लेकिन सिंधिया को पीछे कर भाजपा ने शिवराज सिंह चौहान को अपना चेहरा बना दिया है। इस कारण उपचुनाव को कमलनाथ बनाम शिवराज की लड़ाई बना दिया गया है। कट्टर कांग्रेसी समर्थक भी इस बात से सहमत होंगे कि कमलनाथ जननेता नहीं हैं। वह बड़े आयोजक हैं, न कि आकर्षक चेहरा। रोड शो और रैलियों के दौरान उनकी बेचैनी स्पष्ट दिखाई पड़ती है। वह अपने 15 महीने के कार्यकाल में शायद ही वल्लभ भवन से बाहर निकले होंगे। वहीं शिवराज सिंह चौहान जिन्हें लोग मामा कहते हैं, वे कोरोना में भी लोगों के बीच पहुंचते रहे। जब कांग्रेस 2018 के विधानसभा चुनावों में सबसे बड़ी पार्टी बनकर सामने आई, तो उसने स्थानीय स्तर पर सीमित अभियान चलाया था, न कि पूरी भाजपा से सीधे मुकाबला किया। उन्होंने शिवराज सिंह चौहान के खिलाफ कोई तंज नहीं किया, बल्कि हर सीट पर स्थानीय विधायक के खिलाफ लोगों की नाराजगी का लाभ लिया।

कांग्रेस में भरोसे की कमी

उपचुनाव के मैदान में कांग्रेस में भरोसे की कमी नजर आ रही है। इसकी वजह यह है कि कमलनाथ ने पूरे उपचुनाव को अपने आसपास समेट लिया है। 2018 में कांग्रेस ने एक संयुक्त नेतृत्व की छतरी के नीचे लड़ाई लड़ी। कमलनाथ (महाकौशल), दिग्विजय सिंह (पूरे मप्र में प्रभाव रखने वाले सांसद), ज्योतिरादित्य सिंधिया (ग्वालियर-चंबल), अजय सिंह (विंध्य), अरुण यादव (मालवा) ने अपने-अपने क्षेत्र में जाकर मेहनत कर जीत में भूमिका निभाई थी। हालांकि अब इनमें से अधिकांश नेता सियासी परिदृश्य से गायब हैं। दिग्विजय-कमलनाथ की खुशमिजाजी गायब है, वे बेहद खींचे हुए नजर आते हैं। कमलनाथ सरकार के पतन के पीछे दिग्विजय सिंह के तौर-तरीके माने जाते रहे हैं। अब आरोप लग रहे हैं कि उपचुनावों में उम्मीदवारों के नाम कमलनाथ ही तय कर रहे हैं, जो प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष भी हैं। कहा जाता है कि वे इसके लिए शीर्ष नेतृत्व से सलाह भी नहीं ले रहे हैं। देखने में आ रहा है कि राज्य के शीर्ष दो नेताओं कमलनाथ और दिग्विजय सिंह के बीच विश्वास की कमी आई है।

बंटाधार का स्थान लिया गद्दार ने

मप्र की राजनीति में पिछले दो दशक से भाजपा का चुनावी अभियान मिस्टर बंटाधार पर टिका रहता था। भाजपा बार-बार मिस्टर बंटाधार कहकर दिग्विजय सिंह के दस साल के कार्यकाल को याद दिलाने की कोशिश करती थीं तब मप्र में बिजली और सड़क की बहुत बुरी स्थिति थी। इस उपचुनाव में पहली बार मिस्टर बंटाधार शब्द पूरी तरह गायब है। इसके स्थान पर कांग्रेस ने आक्रामक तरीके से गद्दार शब्द गढ़ लिया है। गद्दार कहकर वह कांग्रेस और उनके समर्थक प्रत्याशियों पर जमकर हमले कर रहे हैं। दूसरी ओर भाजपा अभी तक इसकी कोई काट नहीं ढूंढ पाई है। ज्योतिरादित्य सिंधिया जरूर जवाब देते हैं कि गद्दार कांग्रेस है जिसने मप्र का विकास नहीं किया। लेकिन सिंधिया के जवाब का खास असर दिखाई नहीं दे रहा। पूरा चुनाव गद्दार शब्द पर और जातियों के गुणा-भाग पर टिक गया है। ग्वालियर-चंबल संभाग की सबसे महत्वाकांक्षी योजना चंबल एक्सप्रेस-वे का कोई खास लाभ भाजपा को मिलता दिखाई नहीं दे रहा। अब तो भाजपा नेताओं ने भी अपने भाषणों में इस पर बोलना लगभग बंद कर दिया है। इससे पहले कांग्रेस ने चौकीदार चोर है का अभियान चलाया था, जो लोकसभा चुनाव में काम नहीं कर सका था। कहा जा सकता है कि कांग्रेस गलतियों से सीख नहीं लेती।

100 प्रतिशत जीत जरूरी

230 सदस्यीय सदन में इस समय 202 विधायक हैं। भाजपा के 107, कांग्रेस के 87 और अन्य (बसपा, सपा व निर्दलीय) के 7 विधायक हैं। सदन पूरा होने पर बहुमत का आंकड़ा 116 है। इस जादुई आंकड़े को हासिल करने के लिए कांग्रेस को सभी 28 सीटें जीतनी होंगी, यानी 100 प्रतिशत जीत, जिसकी संभावना बेहद मुश्किल है। कह सकते हैं कि ऐसा होना चमत्कार माना जाएगा। दूसरी ओर भाजपा को सिर्फ 9 सीटें चाहिए। जिसका मतलब है कि 33 प्रतिशत जीत। कह सकते हैं हर तीन में से एक सीट जीतनी होगी।

उपचुनाव की 28 में से 16 सीटें ग्वालियर-चंबल क्षेत्र से हैं, जिसे सिंधिया परिवार का गढ़ माना जाता है। इन सीटों के लिए कांग्रेस के पास मजबूत प्रत्याशी नहीं हैं। 2018 के चुनाव में यहां जिन सीटों पर भाजपा हार गई थी, उन प्रत्याशियों को कांग्रेस लुभाने में नाकाम रही है। जिन सीटों पर पार्टी ने प्रत्याशी घोषित भी किए हैं, उन्हें लेकर कार्यकर्ताओं में खास उत्साह नहीं दिख रहा, क्योंकि अधिकतर दूसरे दलों से आए हैं। हालांकि ऐसी ही स्थितियों से भाजपा भी जूझ रही है। मजबूत प्रत्याशी न दे पाने को कमलनाथ की सांगठनिक कमजोरी के रूप में देखा जा रहा है। इस कारण कांग्रेस पिछड़ी नजर आ रही है।

6 सीटों पर भाजपा का सबसे अधिक फोकस

मप्र के उपचुनाव में जीत के लिए भाजपा पूरा दमखम लगा रही है। वहीं मंत्रियों, सांसदों और पूर्व मंत्रियों को भी हर एक सीट की जिम्मेदारी सौंपी गई है। जीत के लिए भाजपा का पूरा फोकस कम अंतर से जीतने वाली 6 सीटों पर है। जहां 2018 के चुनाव में 6 सीटें 10 हजार से भी कम वोटों से जीती थी, इन सीटों पर भाजपा प्रत्याशी वही है, जो 2018 में कांग्रेस से प्रत्याशी थे। 10 हजार से कम अंतर से जीतने वाली सीटों पर भाजपा जीत के लिए जोर लगा रही है। ताकि इन कमजोर सीटों पर अपनी ताकत मजबूत की जा सके। मुंगावली, सांवेर, अंबाह, पोहरी, अशोकनगर, सुवासरा सीटों पर भाजपा जीत के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा रही है। इन 6 सीटों पर साल 2018 के चुनाव में कांग्रेस प्रत्याशी कम अतंर से जीते थे। अब इन 6 सीटों पर सभी कांग्रेस प्रत्याशी दल बदलकर भाजपा से मैदान में उतरे हैं। ऐसे में भाजपा इन कमजोर कड़ी मानी जाने वाली सीटों पर जीत के लिए पूरा जोर लगा रही है। इन 6 सीटों पर 4 प्रभारियों के साथ केंद्रीय मंत्री नरेंद्र सिंह तोमर, प्रदेश अध्यक्ष वीडी शर्मा भी अपनी नजर बनाए हुए हैं। मुख्यमंत्री भी रोजाना इन सीटों का फीडबैक ले रहे हैं। भाजपा ने कम अंतर वाली 6 सीटों पर जीत के लिए मजबूत प्लान तैयार किया है, जिसमें 19 मंत्रियों, 25 सांसदों और 95 विधायकों की टीम मैदान में मोर्चा संभाले हुए हैं।

फायदे में भाजपा और शिवराज

कमलनाथ सरकार के केवल 15 महीने में गिरने के बाद सत्ता में आए शिवराज सिंह चौहान की मुख्यमंत्री की कुर्सी बची रहेगी या फिर चली जाएगी, इसका फैसला 10 नवंबर को हो जाएगा। लेकिन एक बात तो तय है कि इस उपचुनाव में भाजपा फायदे में रहेगी। क्योंकि 28 सीटों में से केवल एक सीट पर भाजपा विधायक मनोहर ऊंटवाल के निधन के कारण उपचुनाव हो रहा है। अगर भाजपा एक सीट हार भी जाए तो क्या फर्क पड़ता है। लेकिन यदि 28 सीट में 9 सीट भी भाजपा जीत जाती है, तो उसकी सरकार सत्ता में बनी रहेगी। इस स्थिति में मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान अपनी कुर्सी पर बने रहेंगे। इतना ही नहीं शिवराज को अपने मंत्रिमंडल में खाली हुई जगह को नए नेताओं से भरने का अवसर मिलेगा। ऐसा हुआ तो यह कमलनाथ के लिए दूसरा झटका होगा।

आंकड़ों के आधार पर तो शिवराज सिंह चौहान की कुर्सी के लिए कोई खतरा नहीं दिख रहा है। उसकी वजह यह है कि 230 सीटों वाली मप्र विधानसभा में भाजपा के पास 107 विधायक हैं। ऐसे में उसे बहुमत के लिए 28 में से सिर्फ 9 सीटें जीतने की जरूरत है। लेकिन कांग्रेस को सत्ता में वापसी के लिए सभी 28 सीटें जीतने की जरूरत पड़ेगी। दिसंबर 2018 के विधानसभा चुनावों में कांग्रेस को 114 सीटों पर जीत मिली थी, लेकिन विधायकों के टूटने के बाद अब उसके 87 विधायक ही रह गए हैं। अगर दोनों दल उपचुनाव के परिणामों के बाद बहुमत का जादुई आंकड़ा नहीं छू पाते हैं, तो सत्ता की चाबी एक बार फिर बसपा के 2, सपा के 1 और 4 निर्दलीय विधायकों के पास चली जाएगी। फिलहाल कमलनाथ और शिवराज, दोनों यही दावा कर रहे हैं कि उपचुनावों के बाद उनकी पार्टी को बहुमत मिल जाएगा।

चुनावी मैदान में उतरे भाजपा और कांग्रेस के 56 प्रत्याशियों की हार-जीत का प्रभाव सबसे अधिक कमलनाथ और सिंधिया पर पड़ेगा। यानी उपचुनाव का नफा-नुकसान इन्हीं दोनों को उठाना होगा। इसलिए दोनों की राजनीतिक प्रतिष्ठा दांव पर है क्योंकि दोनों को ही इन चुनावों में एक-दूसरे पर बीस सिद्ध करना है और देखने वाली बात यही होगी कि दोनों में से अंततः उन्नीस कौन साबित होता है। कमलनाथ को फिर

विकास पर जातियां हावी

ग्वालियर-चंबल संभाग के इतिहास में पहली बार यहां एक साथ 16 विधानसभा सीटों पर उपचुनाव हो रहे हैं। प्रचार के अंतिम दौर में विकास का मुद्दा पूरी तरह गायब है। दोनों दलों ने चुनाव को पूरी तरह जातिवादी बना दिया है। जौरा में चुनाव ब्राह्मण और ठाकुर के बीच केंद्रित हो गया है। सुमावली सीट पर पूरा चुनाव गुर्जर बनाम अन्य जाति हो गया है। मुरैना सीट पर वैश्य समुदाय यहां जीत-हार का फैसला करेगा। दिमनी सीट पर तोमर वोट प्रभावी है। अंबाह में बड़ी जातियों का वोट निर्णायक रहेगा। मेहगांव में ब्राह्मण बनाम ठाकुर के बीच मुकाबला है। गोहद क्षेत्र में गद्दारी का मुद्दा भी असर दिखा रहा है। कांग्रेस ने गोहद को डॉ. गोविंद सिंह के भरोसे छोड़ा है। मुकाबला रोचक और कड़ा है। ग्वालियर में भाजपा प्रत्याशी प्रद्युम्न सिंह तोमर जातिगत समीकरण से थोड़े घबड़ाए हुए हैं। ग्वालियर पूर्व में बड़ी और छोटी जातियों में मतदाता बंटे हुए हैं। डबरा और भांडेर में भी मतदाता जातिगत आधार पर बंटे हुए हैं। करैरा में कांग्रेस पूरे क्षेत्र में इस सीट को सबसे अधिक सुरक्षित मान रही है। प्रागीलाल जाटव के प्रति मतदाताओं में सहानुभूति साफ दिखाई दे रही है। भाजपा के कमलेश जाटव को रेत का खेल बड़ा नुकसान पहुंचा सकता है। भाजपा का कोई बड़ा नेता फिलहाल यहां सक्रिय नहीं है। पोहरी में कांग्रेस ने दलबदल करने के लिए कुख्यात हरिवल्लभ शुक्ला को टिकट देकर शायद गलती कर दी है। भाजपा के सुरेश धाकड़ कमजोर प्रत्याशी थे लेकिन हरिवल्लभ शुक्ला उन्हें टक्कर नहीं दे पा रहे हैं। पूरा चुनाव जाति पर आकर टिक गया है। बामौरी में कांग्रेस के कन्हैयालाल अग्रवाल पुराने भाजपाई और संघी रहे हैं। वे अपने पुराने संबंधों को भुनाने की कोशिश कर रहे हैं। भाजपा के महेंद्र सिसौदिया को बूथ मैनेजमेंट पर भरोसा है। लेकिन दोनों दलों में भितरघात का खतरा बना हुआ है। कांग्रेस की ओर से लक्ष्मण सिंह और जयवर्धन ने मोर्चा संभाल रखा है। अशोकनगर में भाजपा के जसपाल सिंह जज्जी अभी तक पुराने भाजपाईयों को मनाने में असफल रहे हैं। यही उनकी सबसे बड़ी कमजोरी भी है। 15 महीने मंत्री रहने के दौरान जज्जी पर भाजपा नेताओं पर दमन करने के आरोप इस चुनाव में उन पर ही भारी पड़ रहे हैं। कांग्रेस की आशा दोहरे ने जैन युवक से शादी की है इसलिए उसे जैन वोटों का भारी भरोसा है। मुंगावली में भाजपा से बृजेन्द्र यादव की उम्मीदवारी के बाद से ही भाजपा का बड़ा तबका पार्टी से रूठा हुआ है। भोपाल के पूर्व महापौर आलोक शर्मा पिछले चार माह से यहां डेरा डाले हुए हैं। यादव को सिक्ख समुदाय से विवाद भी भारी पड़ रहा है। कांग्रेस ने लोधी समाज के साधारण व्यक्ति को टिकट देकर नया संदेश दिया है। कांग्रेस फिलहाल एकजुट है।

क्या मंत्रियों की हार का सिलसिला रुक पाएगा?

इस उपचुनाव में प्रदेश सरकार के मंत्रियों की किस्मत का भी फैसला होने वाला है। उपचुनाव में 14 मंत्री (तुलसी सिलावट और गोविंद सिंह राजपूत अब मंत्री नहीं हैं) चुनाव लड़ रहे हैं। ये हैं सुरखी से गोविंद सिंह राजपूत (जिन्हें हाल ही में मंत्री पद छोड़ना पड़ा), बदनावर से राजवर्धन सिंह, सुवासरा से हरदीप सिंह डंग, दिमनी से गिर्राज सिंह दंडोतिया, ग्वालियर से प्रद्युम्न सिंह तोमर, डबरा से इमरती देवी, बमोरी से महेंद्र सिंह सिसौदिया, अनूपपुर से बिसाहूलाल सिंह, सांची से प्रभुराम चौधरी, सांवेर से तुलसीराम सिलावट (जिन्हें हाल ही में मंत्री पद छोड़ना पड़ा), सुमावली से एदल सिंह कंसाना, मेहगांव से ओपीएस भदौरिया, मुंगावली से बृजेंद्र सिंह यादव और पोहरी से सुरेश धाकड़। भाजपा को मिली रिपोर्ट के अनुसार करीब आधा दर्जन से अधिक मंत्रियों पर हार का खतरा मंडरा रहा है। इनमें गोविंद सिंह राजपूत, तुलसी सिलावट, गिर्राज सिंह दंडोतिया, एदल सिंह कंसाना, महेंद्र सिंह सिसौदिया, ओपीएस भदौरिया, राजवर्धन सिंह दत्तीगांव, हरदीप सिंह डंग और बृजेंद्र सिंह यादव खतरे में हैं। इनमें से कौन जीतता है और कौन हारता है, यह तो 10 नवंबर को साफ होगा। उधर, कांग्रेस को उम्मीद है कि वर्ष 2018 की तरह उपचुनाव में भी मंत्रियों को हार का मुंह देखना पड़ेगा। गौरतलब है कि 2018 के विधानसभा चुनाव में भाजपा ने अपने 25 मंत्रियों पर भरोसा जताते हुए उन्हें चुनावी मैदान में उतारा था। मगर इनमें से 13 को हार का सामना करना पड़ा था। केवल 12 मंत्री ही चुनाव जीत सके थे। हारने वालों में भाजपा सरकार में वित्त मंत्री रहे जयंत मलैया, ओम प्रकाश धुर्वे, रुस्तम सिंह, अर्चना चिटनिस, उमाशंकर गुप्ता, अंतर सिंह आर्य, जयभान सिंह पवैया, नारायण सिंह कुशवाहा, दीपक जोशी, लाल सिंह आर्य, शरद जैन, ललिता यादव, बालकृष्ण पाटीदार के नाम शामिल हैं। वहीं वर्ष 2013 के विधानसभा चुनाव में भी भाजपा सरकार के 10 मंत्रियों को हार का मुंह देखना पड़ा था। इनमें अजय विश्नोई, लक्ष्मीकांत शर्मा, रामकृष्ण कुसमरिया, करण सिंह वर्मा, अनूप मिश्रा, जगन्नाथ सिंह, कन्हैयालाल अग्रवाल, हरिशंकर खटीक, बृजेंद्र प्रताप सिंह और दशरथ लोधी हार के चलते विधानसभा की दहलीज तक नहीं पहुंच सके थे।

से अपनी सरकार बनाना है तो सिंधिया को जनता की अदालत में सरकार गिराने के औचित्य और खासकर ग्वालियर-चंबल संभाग में अपना प्रभाव यथावत है यह साबित करना है। इन दोनों की प्रतिष्ठा की लड़ाई में यदि कुछ दांव पर है तो वह मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान की सरकार, क्योंकि नतीजों के बाद ही यह तय होगा कि भाजपा की सरकार बनी रहेगी या कमलनाथ फिर मुख्यमंत्री बनेंगे।

गौरतलब है कि 2018 में 15 साल का सत्ता का वनवास समाप्त होना कांग्रेस के त्रिकोण पर आश्रित था जिनमें कमलनाथ, ज्योतिरादित्य सिंधिया और दिग्विजय सिंह थे। इनमें से एक कोण अब भाजपा के पाले में है, तो सवाल यही है कि उस तीसरे कोण की भरपाई कांग्रेस में कोई एक व्यक्ति कर पाएगा या फिर कुछ नेताओं का मिला-जुला प्रयास फिर से कांग्रेस की सरकार बनने का मार्ग प्रशस्त करेगा। कुछ सर्वे रिपोर्ट से कमलनाथ गदगद हैं और उन्हें भरोसा हो चला है कि फिर से उनकी सरकार बनेगी, इसलिए अब वे एक्शन मोड में आकर आत्मविश्वास से लबरेज होकर फ्रंट फुट पर खेल रहे हैं और स्वयं सारे सूत्र अपने हाथ में विधानसभा चुनाव की तरह रखे हुए हैं। उधर, ग्वालियर के **महाराज खुद कहते हैं** कि यह उपचुनाव उनका है। वह अपने कार्यकर्ताओं को भी यही संदेश दे रहे हैं। इतना ही नहीं इस उपचुनाव में डबरा की जनसभा में ज्योतिरादित्य सिंधिया के मंच से दिखाई दिए आक्रोश ने भी इसी का संकेत दिया है।

कसौटी पर कांग्रेस के ही नेता

इस बार हो रहे उपचुनाव की सबसे बड़ी खासियत यह है कि चुनावी कसौटी पर कांग्रेस के ही अधिकांश नेता चढ़े है। बस अंतर इतना है कि कुछ पूर्व हैं जो अब भाजपाई बन चुके हैं और कुछ वर्तमान हैं। दरअसल, उपचुनाव में भाजपा और कांग्रेस की ओर से जो 56 प्रत्याशी मैदान में हैं उनमें से 45 कांग्रेसी पृष्ठभूमि के हैं। इनमें से 25 पूर्व कांग्रेसी हैं जो भाजपा की तरफ से चुनाव लड़ रहे हैं, वहीं 20 कांग्रेस की ओर से मैदान में हैं। यानी भाजपा ने जहां 25 तो कांग्रेस ने 9 दलबदलू नेताओं को टिकट दिया है। ऐसे में दलबदलू नेताओं के साथ आए उनके कार्यकर्ता भाजपा के कार्यकर्ताओं के साथ कितना घुलमिल गए हैं, यह एक बड़ा सवाल है। इसी तरह भाजपा के कई दलबदलू नेता भी कांग्रेस के टिकट से चुनाव लड़ रहे हैं। ऐसे में उन नेताओं के समर्थक भाजपा छोड़कर कांग्रेस में आ गए हैं। कांग्रेस में भी भाजपा की तरह ही स्थिति है। ऐसे में दोनों पार्टियों का जोर कार्यकर्ताओं पर फोकस है। दोनों ही पार्टियां भाजपा और कांग्रेस के कार्यकर्ताओं के बीच तालमेल बिठाने की कोशिश कर रही है।

सिंधिया की सल्तनत में सेंध

कमलनाथ और कांग्रेस की सबसे बड़ी रणनीति यह है कि किसी भी तरह सिंधिया की सल्तनत में सेंध लगाया जाए। इसके लिए पार्टी ने ग्वालियर-चंबल अंचल पर अपना मुख्य फोकस कर रखा है। गौरतलब है कि गुना और ग्वालियर ये दोनों ही सिंधिया परिवार के परंपरागत संसदीय क्षेत्र रहे हैं। ज्योतिरादित्य सिंधिया के पिता माधवराव सिंधिया पहले ग्वालियर सीट से सांसद चुने गए थे। बाद में भाजपा नेता जयभान सिंह पवैया के मजबूती से उभरने के कारण उन्हें ग्वालियर छोड़ना पड़ा। फिर वे गुना आ गए। माधवराव सिंधिया के निधन के बाद जबसे ज्योतिरादित्य ने सियासत में कदम रखा है, तब से गुना संसदीय सीट को राजनीतिक विरासत माना। अब कांग्रेस का गेमप्लान इसी सीट के कोर एरिया में सिंधिया की सल्तनत में सेंध लगाकर ध्वस्त करने का है। गुना की जंग में सिंधिया सल्तनत और दिग्विजय रियासत बड़ा फैक्टर है। गुना की चार में से तीन सीटें अभी सिंधिया समर्थकों से बाहर हैं। इनमें एक सीट पर दिग्विजय के पुत्र जयवर्धन सिंह और एक पर छोटे भाई लक्ष्मण सिंह काबिज हैं। एक सीट पर भाजपा विधायक गोपीलाल जाटव हैं। बमोरी सीट पर सिंधिया समर्थक मंत्री महेंद्र सिंह सिसौदिया चुनाव लड़ रहे हैं। कांग्रेस का गेमप्लान है कि किसी तरह उपचुनाव में सिसौदिया को हराया जाए। सिसौदिया यदि हार जाते हैं तो पार्टी स्तर पर भाजपा और कांग्रेस की दो-दो सीटें हो जाएंगी। लेकिन, सिसौदिया की हार सिंधिया के लिए गुना में गेमओवर जैसी होगी। यहां दिग्विजय के पुत्र जयवर्धन सिंह जुटे हुए हैं। हर बूथ तक उनकी पहुंच है। एक बड़ा फैक्टर पूर्व मंत्री कन्हैयालाल अग्रवाल को कांग्रेस प्रत्याशी बनाना है। सिसौदिया पिछली बार 27 हजार वोट से जीते थे, जबकि अग्रवाल निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में 28 हजार से ज्यादा वोट ले गए थे। तब, भाजपा ने अग्रवाल को टिकट नहीं दिया था। वे निर्दलीय उतरे थे। इस बार कांग्रेस ने उन्हें टिकट देकर मैदान में मुकाबला कांटे का कर दिया है।

भूखे पेट 'विश्वगुरु'

2020 का ग्लोबल हंगर इंडेक्स भारतीयों के लिए आंखें खोलने वाला है। यह बात हैरान नहीं करती कि भारत 107 देशों में 94 नंबर पर है क्योंकि 2019 में भारत की रैंकिंग 119 देशों के बीच 103 और 2018 में 117 देशों के बीच 102 रही थी। हैरानी की बात यह है कि अफगानिस्तान को छोड़कर भारत अपने सभी पड़ोसियों से ग्लोबल हंगर इंडेक्स में पीछे हैं। तेज रफ्तार विकास दर से लेकर 5 ट्रिलियन डॉलर की इकॉनोमी बनने का सपना दिखाते हुए दुनिया में भारत को विश्वगुरू बना रहे नेतृत्व पर ताजा आंकड़ा करारा तमाचा है। जरा सोचिए कि दुनिया का भावी विश्वगुरू भारत आज किस हाल में है कि भूख से बिलबिलाते देशों के बीच इससे बदतर हाल सिर्फ नॉर्थ कोरिया, रवांडा, नाइजीरिया, अफगानिस्तान, लेसोथो और सिएरा लियोन का है। सूडान और भारत के अंक बराबर हैं। पड़ोसी देशों की चर्चा कर लें। श्रीलंका का ग्लोबल हंगर इंडेक्स यानी जीएचआई 16.3 है और यह 64वें नंबर पर है जबकि नेपाल 19.5 जीएचआई के साथ 73वें नंबर पर है। बांग्लादेश, म्यांमार और पाकिस्तान क्रमश: 75, 78 और 88वें नंबर पर हैं।

ताजा आंकड़े में अभी कोरोना की एंट्री नहीं हुई है। यह आंकड़ा तो 2021 में आएगा। तब कैसी भयावह तस्वीर रहने वाली है इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। विश्व बैंक ने आशंका जताई है कि 'बेहद गरीब' लोगों की तादाद बीते दो दशकों में सबसे ज्यादा रहने वाली है। विश्व बैंक के पैमाने पर 'बेहद गरीब' वे लोग हैं जिनकी प्रतिदिन की आमदनी 1.9 अमेरिकी डॉलर है। भारतीय रुपए में यह रकम 139.53 रुपए होती है। विश्व बैंक के मुताबिक अभी 115 करोड़ लोग 'बेहद गरीब' की श्रेणी में आने वाले हैं और 2021 तक इनकी संख्या बढ़कर 150 करोड़ हो जाएगी। भारत में कोरोना से पहले 2017 में गरीबों की संख्या 36 करोड़ थी। यही संख्या 2005-06 में 64 करोड़ थी। स्मरण रहे कि 2006 से 2016 के बीच 27 करोड़ लोग गरीबी रेखा से ऊपर उठे थे। सीएमआईई के आंकड़े कहते हैं कि कोरोनाकाल में अप्रैल से जुलाई के बीच भारत में 1 करोड़ 89 लाख लोगों की नौकरियां छिन गईं। नौकरी से लेकर कारोबार तक पर बुरे असर को पहली तिमाही में 23.9 फीसदी नकारात्मक विकास दर से आंका जा सकता है।

कोरोना की महामारी ने विश्व बैंक के उस प्रयास पर पानी फेर दिया है जो 2013 में इस मकसद के साथ शुरू किया गया था कि 2030 तक 'बेहद गरीब' की श्रेणी में 3 प्रतिशत से अधिक लोग नहीं रहें। कोरोना महामारी से पहले उम्मीद की जा रही थी कि 2020 तक 'बेहद गरीब' वाली श्रेणी में वैश्विक आबादी का 7.9 प्रतिशत तक की आबादी होगी। आज दुनिया की आबादी 7.8 अरब है। इस हिसाब से 'बेहद गरीब' लोगों की तादाद 61.62 करोड़ रहने वाली थी। मगर, कोरोना की महामारी के बाद अब यह तादाद बढ़कर 9.1 प्रतिशत से लेकर 9.4 प्रतिशत के बीच यानी 70.98 करोड़ से लेकर 73.32 करोड़ तक होगी।

यह वही आबादी है जो दुनिया में भुखमरी की शिकार है। नोबल पुरस्कार प्राप्त संयुक्त राष्ट्र के वर्ल्ड फूड प्रोग्राम के मुताबिक पिछले साल भुखमरी की शिकार आबादी 69 करोड़ थी। वर्ल्ड फूड प्रोग्राम के प्रमुख डेविड बीएस्ले ने दुनिया के 200 से ज्यादा अरबपतियों से अपील की है कि वे उदारतापूर्वक अपने पर्स खाली करें और भूखे लोगों को की मदद करें। यह अपील इसलिए करनी पड़ रही है क्योंकि दुनियाभर के अमीर जरूरत के वक्त मानवता दिखाने को आगे नहीं आ रहे हैं। वाशिंगटन पोस्ट में जून में प्रकाशित रिपोर्ट के मुताबिक अमेरिका के 50 अमीर लोग कोरोना से लड़ाई में योगदान के तौर पर अपनी दौलत का 0.1 प्रतिशत हिस्सा ही निकाल पाए थे।

दुनिया में अरबपतियों की तादाद 2017 में 2,158 थी जो अब 2,189 हो चुकी है। कोरोना काल में भी इन अरबपतियों की दौलत में 27.5 फीसदी का इजाफा हुआ है। यह 10.2 ट्रिलियन डॉलर है। दूसरे शब्दों में यह रकम प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के उस सपने वाली रकम 5 ट्रिलियन डॉलर के दुगुने से ज्यादा है जहां वे भारतीय अर्थव्यवस्था के आकार को पहुंचाना चाहते हैं। स्विट्जरलैंड में यूबीएस की ओर से जारी आंकड़ों के मुताबिक अप्रैल से जुलाई के बीच कोरोनाकाल में भारतीय अरबपतियों की दौलत में 35 फीसदी का इजाफा हुआ है और यह बढ़कर 423 बिलियन डॉलर पहुंच गया है। जाहिर है कोरोनाकाल में भारत में अमीरों की दौलत बढ़ने की गति कहीं अधिक तेज है।

● नवीन रघुवंशी

कोरोनाकाल में भी नहीं दिखा दान-योगदान

भारत में 9 अरबपतियों ने कोविड-19 से लड़ने के लिए 541 मिलियन डॉलर का दान दिया है। इंडिया स्पेंड की 20 मई की रिपोर्ट के मुताबिक पीएम केयर्स फंड में 9677 करोड़ (1.27 बिलियन डॉलर) की रकम दान स्वरूप आयी थी। इसमें सरकारी उद्यमों के कर्मचारियों की सैलरी समेत हर वर्ग का योगदान शामिल हैं। प्रांतीय स्तर पर भी कोविड-19 के फंड बने हैं। फिर भी कोविड से लड़ाई के लिए दानस्वरूप अमीर वर्ग को जो उदारता दिखानी चाहिए वह दिखलाई नहीं देती। हालांकि हुरून इंडिया लिस्ट में शामिल 828 भारतीय अमीरों के पास 821 अरब डॉलर की दौलत हैं जो रुपए में 60.59 लाख करोड़ होता है। अगर इन अमीरों ने अपनी दौलत का 1 प्रतिशत भी कोविड-19 से संघर्ष में दिया होता तो यह 8.2 बिलियन डॉलर या 8210 मिलियन डॉलर होता। जाहिर है भारत में कोरोना से लड़ने की ताकत काफी अधिक होती और भुखमरी जैसी स्थिति से बेहतर तरीके से लड़ा जा सकता था। फोर्ब्स की रिपोर्ट के मुताबिक भारत की 1 प्रतिशत अमीर आबादी के पास 42.5 फीसदी दौलत है। वहीं अमीरों की दूसरी तरफ खड़ी आधी आबादी के पास बमुश्किल 2.8 फीसदी दौलत है। भारत की 10 प्रतिशत अमीर आबादी के पास 74.3 फीसदी दौलत है तो शेष 90 फीसदी के पास 25.7 फीसदी। सवाल ये है कि इन दौलतमंदों से इस वक्त उम्मीद न की जाए तो कब की जाए? ऐसा क्यों हो कि दुनिया की बड़ी आबादी भुखमरी और बदहाली की चपेट में आएं और एक तबका आपदा में भी अवसर देखे और उसकी दौलत दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती रहे?

‘अटल बिहारी वाजपेयी और लालकृष्ण आडवाणी ने कांग्रेस को सत्ता से दूर रखने के लिए एनडीए का गठन किया था। इसके सहारे उन्होंने भाजपा को न केवल मजबूत किया बल्कि सत्ता भी हासिल की। लेकिन मोदी-शाह की जोड़ी एनडीए की बलि देती जा रही है। दरअसल, इनकी कोशिश यह है कि भाजपा के आगे उसकी सहयोगी पार्टियां दबी रहें। जिसने भी बराबरी की कोशिश की, उसे दरकिनार कर दिया गया। इससे एनडीए का परिवार दिन पर दिन सिमटता जा रहा है।’

एनडीए की बलि

लालकृष्ण आडवाणी की भाजपा ने 1998 में 25 से ज्यादा सहयोगियों को मिलाकर राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) का गठन किया था और इसके साथ भारत में सबसे सफल गठबंधन की राजनीति की शुरुआत हुई थी। इसके बाद तीन ऐसे गठबंधनों ने पूरे कार्यकाल तक सरकार चलाई जिसमें केंद्रीय पार्टी को बहुमत हासिल नहीं था। लेकिन 2020 में आज नरेंद्र मोदी और अमित शाह की भाजपा ने एनडीए को खत्म कर दिया है और राष्ट्रीय राजनीति के लिए नए कायदे और नए समीकरण तय कर दिए हैं। आडवाणी के एनडीए को खत्म कर दिया गया है, उसका इस्तेमाल करके फेंक दिया गया है। आप इसकी तुलना वैदिक विधान से किए जाने वाले अश्वमेध यज्ञ से कर सकते हैं। जब आपके अश्व ने पूरे राष्ट्र में निर्बाध घूमकर आपकी सत्ता, आपकी संप्रभुता स्थापित कर दी हो, तब आप क्या करते हैं? उस पवित्र अश्व की बलि चढ़ा देते हैं। एनडीए वही बलि का अश्व था। और हम यह कोई फैसला नहीं सुना रहे हैं।

इसे आज भी एनडीए की सरकार कहा जाता है, भले ही 53 सदस्यों वाले इसकी मंत्रिपरिषद में गठबंधन का केवल एक सहयोगी शामिल है। अगर आपको उसका नाम याद नहीं आ रहा तो परेशान मत होइए। हम आपको गूगल में सर्च करने की जहमत से बचाते हुए बता देते हैं कि वे हैं रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (आरपीआई) के उस धड़े के नेता रामदास अठावले जो धड़ा उनके ही नाम से जाना जाता है। एनडीए की गठबंधन सरकार नाम की कोई चीज आज मौजूद है, इसकी याद दिलाने वाले केवल एक वे ही प्रतीक हैं। यह वैसा ही है जैसे 1990 के दशक में आडवाणी की रथयात्रा को ‘सेक्युलर’ साबित करने के लिए उनके रथ का सारथी एक मुसलमान था।

अठावले अपनी मौजूदगी का एहसास दिलाने के लिए गाहे-बगाहे ऐसा कुछ बोलते रहते हैं जिसके ‘वायरल’ होने की गारंटी रहती है। मंत्रिपरिषद में उन्हें वह जगह दी गई है जिसके वे हकदार हैं। उनकी पार्टी का महाराष्ट्र में दलितों के बीच छोटा-सा वोट आधार है। इसलिए उन्हें सामाजिक न्याय एवं सशक्तीकरण विभाग का राज्यमंत्री बनाया गया है। यह तो एक क्षेपक है लेकिन कैबिनेट में एकमात्र मुसलमान सदस्य जो हैं, उन्हें भी इसी तरह अल्पसंख्यक मामलों का विभाग सौंपा गया है।

क्या इसके लिए आप मोदी-शाह की भाजपा की आलोचना कर सकते हैं? इस सवाल का जवाब हरियाणा के पूर्व मुख्यमंत्री (भ्रष्टाचार के लिए जेल भेजे गए, फिलहाल पैरोल पर) ओम प्रकाश चौटाला के इस बयान में मिल सकता है जिसमें उन्होंने कहा था- ‘हम यहां तीर्थ यात्रा पर नहीं आए, राजनीति सत्ता के लिए होती है।’ नई भाजपा इस कसौटी पर खरी उतरती है, भले ही किसी के पैर कुचले हों, किसी का अंगभंग हुआ हो और कई के अहम चकनाचूर हुए हों।

अब हम 1998 से 2014 पर आ जाएं। भाजपा को बहुमत मिल गया। फिर भी सात सहयोगी दल सरकार के साथ थे। शिवसेना, रामविलास पासवान की लोक जनशक्ति पार्टी (लोजपा), चंद्रबाबू नायडू की तेलुगू देसम पार्टी (टीडीपी), शिरोमणि अकाली दल (एसएडी) कैबिनेट में शामिल थे। अनुप्रिया पटेल का अपना दल, उपेंद्र कुशवाहा की लोकतांत्रिक समाजवादी पार्टी (आरएसपी) और अठावले की आरपीआई में से टीडीपी को छोड़ हरेक के राज्यमंत्री सरकार में थे।

6 साल बाद अगर इनमें से केवल अठावले ही परिभाषा के मुताबिक अभी भी एनडीए

एनडीए नहीं, भाजपा की रैली

बिहार चुनाव के लिए प्रधानमंत्री की रैलियों की घोषणा हुई थी तो बताया गया था कि हर रैली एनडीए की रैली होगी। साफ तौर पर कहा गया था कि यह भाजपा की नहीं, बल्कि एनडीए की रैलियां होंगी। इससे जदयू के नेता खुश थे। उनको लग रहा था कि एनडीए की रैली होगी तो अपने आप भाजपा के कार्यकर्ताओं को सिग्नल होगा और आम मतदाता के दिमाग से भी कंफ्यूजन निकलेगा। प्रधानमंत्री की पहली रैली के लिए सासाराम का चुनाव भी अच्छा था क्योंकि इस इलाके में लगभग सभी सीटों पर जदयू लड़ रही है और उसके खिलाफ चिराग पासवान ने लोजपा के उम्मीदवार उतारे हैं। सो, लगा था कि इस जगह का चुनाव रणनीतिक रूप से किया गया है। परंतु जदयू के नेता जैसा सोच रहे थे सब कुछ उसके उलटा हो गया। रैली पूरी तरह से भाजपा की हो गई। जदयू बिल्कुल हाशिए में चली गई। इसके लिए जदयू के नेता भी जिम्मेदार हैं, जिन्होंने इस बात के लिए जोर नहीं लगाया कि उनके समर्थक अपना झंडा-बैनर लेकर रैली में पहुंचें। इसका नतीजा यह हुआ कि चारों तरफ सिर्फ भाजपा के झंडे और कमल का निशान दिख रहा था।

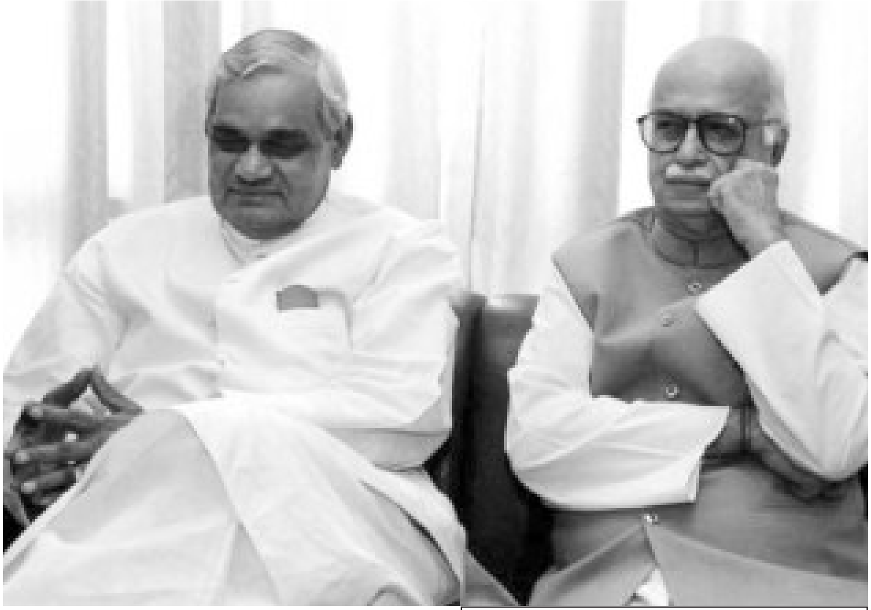

सरकार में बचे हुए हैं तो इससे साफ है कि हमारी राष्ट्रीय राजनीति किस कदर बदल गई है। राष्ट्रीय राजनीति पर अपने वर्चस्व के साथ मोदी-शाह की भाजपा वैसी ही हो गई है जैसी कांग्रेस इंदिरा गांधी के नेतृत्व में हो गई थी। वह गठबंधन के सहयोगियों की, उनके लालच और अहम की क्यों परवाह करेगी? वे 'तीर्थ यात्रा' के लिए राजनीति में थोड़े ही आए हैं।

यहां हम बीते हुए कल की वकालत नहीं कर रहे हैं। इसके विपरीत, यह भविष्य की राजनीति को गति देने वाली चीज साबित हो सकती है। फिर भी हमें पीछे मुड़कर देखने की जरूरत है। आडवाणी और अटल बिहारी वाजपेयी ने एनडीए के पहले गठजोड़ में जिन पार्टियों को जोड़ा था उनमें से कई आज अस्तित्व में नहीं हैं, उनमें से कई के नाम भी आज हिज्जे की गलतियां नजर आएंगी और आईएएस का टॉपर भी शायद उनका नाम याद न कर पाए। लेकिन कुछ नाम तो शायद ही भुलाए जा सकते हैं।

एनडीए के मूल कैबिनेट में जॉर्ज फर्नांडीस रक्षामंत्री थे और वे सहयोगी दल के आखिरी सदस्य थे जिन्हें सुरक्षा मामलों की महिमा मंडित कमेटी (सीसीएस) में जगह मिली थी। उनके कॉमरेड और कभी दोस्त कभी दुश्मन नीतीश कुमार कभी रेल मंत्री रहे तो कभी कृषि मंत्री। ममता बनर्जी, नवीन पटनायक, शरद यादव और रामविलास पासवान भी महत्वपूर्ण विभागों के मंत्री रहे। इसी तरह सुरेश प्रभु थे जो उस समय शिवसेना में थे। नायडू की टीडीपी लोकसभा अध्यक्ष (जीएमसी बालयोगी) के रूप में शामिल थी। सहयोगी दल के आखिरी सदस्य थे। नेशनल कांफ्रेंस के अब्दुल्ला पिता-पुत्र भी जुड़े थे। यह एक प्रामाणिक विशाल गठबंधन था।

आज नीतीश एनडीए के सहयोगी हैं मगर केंद्रीय कैबिनेट में उनकी पार्टी का कोई भी नहीं है और बिहार में वे हर दिन सिकुड़ते जा रहे हैं। वे वहां फिर शायद मुख्यमंत्री बन जाएं लेकिन यह उनका आखिरी कार्यकाल ही साबित हो सकता है। उनके परिवार या पार्टी में उनका कोई उत्तराधिकारी नहीं है, सो भाजपा उनके पूरी तरह बेअसर होने का इंतजार कर सकती है और तब कब्जा जमा सकती है।

पश्चिम बंगाल में भाजपा अपनी पूर्व सहयोगी ममता बनर्जी से आरपार की लड़ाई लड़ रही है। वे जीतें या हारें, कमजोर तो होंगी ही और भाजपा राज्य की प्रमुख राष्ट्रीय पार्टी बन जाएगी। नवीन पटनायक को ओडिशा में अलग-थलग कर दिया गया है, बेशक उन्हें कभी-कभी परेशान किया जाता है लेकिन भाजपा को पता है कि वे उम्रदराज हो रहे हैं और उनके बाद तो मैदान उसी का है। मुमकिन है कि 2024 के चुनाव से पहले ही वह वहां बाजी पलटने की चाल चल दे। खेल जाना-पहचाना है। एक-दो असंतुष्ट सामने आएंगे, कुछ आरोप उछालेंगे, सीबीआई, ईडी, आदि एजेंसियां दखल देंगी, समर्थक टीवी चैनल और सोशल मीडिया पर जंग शुरू हो जाएगी और अकेले मुख्यमंत्री के लिए इन सबका मुकाबला करना मुश्किल हो जाएगा, खासकर पटनायक के लिए जो 2024 में उस उम्र में पहुंच जाएंगे। अब्दुल्ला पिता-पुत्र को एक साल हिरासत में रखा गया और महबूबा मुफ्ती को भी, हालांकि वे मोदी-शाह दौर में भाजपा की सहयोगी बनी थीं।

शिवसेना तो अब दुश्मन ही बन गई है और सुरेश प्रभु भाजपा में शामिल हो गए हैं। शरद यादव अप्रासंगिक होने के कगार पर हैं और उनकी बेटी सुभाषिणी अभी-अभी कांग्रेस में शामिल हो गई हैं। पासवान का वंश जानी-पहचानी लंबी कहानी की तरह खिंच रहा है और इस बार का बिहार विधानसभा चुनाव उनकी पार्टी के पटाक्षेप की कहानी लिख सकता है। चंद्रबाबू नायडू अब प्रतिद्वंदी हैं और आंध्रप्रदेश में उन्हें परास्त करने वाले जगन मोहन रेड्डी सीबीआई और ईडी के रहमोकरम पर हैं। वे न्यायपालिका में हताश लड़ाई लड़ रहे हैं और मोदी सरकार हमेशा उन पर भारी पड़ सकती है। दक्षिण में और आगे बढ़ें तो भाजपा को कमजोर पड़ी एआईडीएमके से निपटने में कोई दिक्कत नहीं होगी, वह बस मौके का इंतजार कर रही है। राजनीति दरअसल युद्ध का सबसे क्रूर रूप है। इसलिए स्थिति ऐसी है कि पटनायक, रेड्डी, नीतीश, सबको पता है कि भाजपा उसका शिकार करने और उन्हें बेदखल कर देने वाली है। फिर भी, वे चुनावों में मुकाबला करेंगे। अपने अपमान को पी लेने के सिवाय और अहम मसलों पर राज्यसभा में भाजपा के पक्ष में मतदान करने के सिवाय उनके पास कोई उपाय नहीं है।

● **इन्द्र कुमार**

डिसलाइक का रहस्य

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर मिल रहे डिसलाइक का क्या रहस्य है? अचानक दो महीने पहले ऐसा क्या हुआ, जिसकी वजह से प्रधानमंत्री के वीडियोज को लाइक से ज्यादा डिसलाइक किया जाने लगा? काफी समय के बाद प्रधानमंत्री मोदी ने गत दिनों राष्ट्र को संबोधित किया। जैसे ही उनका संबोधन शुरू हुआ और भारतीय जनता पार्टी के यूट्यूब चैनल पर लाइव हुआ, उसे डिसलाइक मिलने लगे। एक मिनट के अंदर 28 सौ लाइक थे और साढ़े चार हजार डिसलाइक हो गए। आनन-फानन में पार्टी ने नंबर्स छिपा दिए। उनका 12 मिनट का भाषण खत्म हुआ तो भाजपा के यूट्यूब चैनल पर नहीं दिख रहा था कि कितने लोगों ने इसे लाइक किया और कितने लोगों ने डिसलाइक किया। हालांकि प्रधानमंत्री कार्यालय, प्रधानमंत्री मोदी की अपनी साइट और पीआईबी की साइट पर लाइक्स ज्यादा थे। वहां लाइक्स ज्यादा थे तो दिख रहे थे। भाजपा की साइट पर नहीं दिख रहे थे इसका मतलब है कि वहां डिसलाइक ज्यादा थे। इसका क्या मतलब निकाला जाए? क्या पीएमओ, पीआईबी वगैरह ठीक काम कर रहे हैं और भाजपा का आईटी सेल ठीक काम नहीं कर रहा है? यह बात गले नहीं उतरती है। भाजपा का आईटी सेल तो इतना सक्षम है कि भाजपा के अपने सांसद सुब्रह्मण्यम स्वामी तक उसके शिकार बन गए। इसका मतलब है कि कहीं न कहीं देश के लोगों में लगातार होने वाले भाषणों से उब हुई है। एक अनुमान यह भी है कि कोरोना के बीच नीट, जेईई की परीक्षाएं कराने से छात्र-नौजवान नाराज हैं तो कृषि और श्रम कानूनों में बदलाव से किसानों, मजदूरों में नाराजगी है, जिसका असर सोशल मीडिया पर दिख रहा है।

देश में अधिकांश पार्टियां वह राजनीति करने लगी हैं, जो भाजपा करती है या चाहती है कि बाकी पार्टियां भी ऐसा ही करें। कांग्रेस भी उसी दिशा में बहती चली जा रही है। हाल ही में जम्मू-कश्मीर में अनुच्छेद-370 की बहाली की मांग करके उसने देशभर में जनता को नाखुश कर दिया है। माना जा रहा है कि इस मांग का समर्थन करके कांग्रेस ने अपने पैर पर कुल्हाड़ी मार ली है।

अपने पैरों पर कुल्हाड़ी

कांग्रेस पार्टी अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार रही है, जो वह जम्मू-कश्मीर में अनुच्छेद-370 की बहाली की मांग का समर्थन कर रही है। नेशनल कांफ्रेंस और पीपुल्स डेमोक्रेटिक पार्टी अगर जम्मू-कश्मीर में अनुच्छेद-370 और अनुच्छेद-35ए की बहाली की मांग कर रहे हैं तो उनकी मांग समझ में आती है। यह उनके लिए जीवन-मरण का सवाल है। उन दोनों पार्टियों की राजनीति जम्मू-कश्मीर की सीमाओं में बंधी हैं। उनको पता है कि राज्य की राजनीति में प्रासंगिक बने रहने के लिए जम्मू-कश्मीर के विशेष राज्य के दर्जे की बहाली और राज्य का बंटवारा रद्द करने की मांग उनके पास एकमात्र मुद्दा है। लेकिन अगर कांग्रेस उनकी इस मांग का समर्थन करती है तो यह उसके लिए आत्मघाती साबित होगा।

जम्मू-कश्मीर में अनुच्छेद-370 और अनुच्छेद-35ए की बहाली का मुद्दा अब सिर्फ कश्मीर घाटी भर का मुद्दा रह गया है। घाटी के 67 लाख मुस्लिम आबादी के लिए यह भावनात्मक मुद्दा जरूर है पर जम्मू इलाके में भी इसकी कोई मांग नहीं हो रही है। जम्मू-कश्मीर से अलग किए गए लद्दाख के लोग अपनी स्वायत्त स्थिति से खुश हैं। सो, कश्मीर घाटी के थोड़े से लोगों को और देश की एक बेहद छोटी लेफ्ट, लिबरल जमात को छोड़कर बाकी देश की जनता को इससे मतलब नहीं है। यह एक किस्म का भ्रम है कि देश के मुसलमानों को, देश की 14 फीसदी आबादी को जम्मू-कश्मीर की विशेष स्थिति की चिंता है। देश के मुसलमानों को भी इससे कोई खास मतलब नहीं है कि जम्मू-कश्मीर का विशेष दर्ज बहाल होता है या नहीं। और जहां तक देश के मुसलमानों के सद्भाव का सवाल है तो कांग्रेस ने वह सद्भाव 6 दिसंबर 1992 को गंवा दिया था। उसके बाद से तो कांग्रेस को जो भी मुस्लिम वोट मिलता है वह मजबूरी में मिलता है। मुसलमान को जहां भी कांग्रेस का विकल्प दिखा उसने दोनों बांहें फैलाकर उसका आलिंगन किया। इसलिए कांग्रेस को किसी भ्रम में नहीं रहना चाहिए।

कांग्रेस को यह ध्यान रखना चाहिए कि उसे अखिल भारतीय राजनीति करनी है। वह जम्मू-कश्मीर की क्षेत्रीय पार्टी नहीं है। यह भ्रम भी नहीं पालना चाहिए कि जम्मू-कश्मीर प्रादेशिक कांग्रेस के नेता पीडीपी और नेशनल कांफ्रेंस की मांग का समर्थन करेंगे और कांग्रेस का केंद्रीय नेतृत्व चुप रहेगा तो देश की जनता इसे नहीं समझेगी। वैसे भी पी चिदंबरम ने अनुच्छेद-370 की बहाली की मांग करके सब गुड़ गोबर कर दिया है। भाजपा ने इस मुद्दे को पकड़ लिया है और अब वह कांग्रेस को चुनौती दे रही है कि वह बिहार के चुनाव में अपने घोषणापत्र में यह बात शामिल करे कि वह जम्मू-कश्मीर में अनुच्छेद-370 बहाल कराना चाहती है। कांग्रेस को तत्काल इस पर सफाई देनी चाहिए।

कांग्रेस को यह भी समझना चाहिए कि जम्मू-कश्मीर का विशेष राज्य का दर्जा खत्म करना और कृषि कानूनों में बदलाव करके नए कानून बनाने का मसला अलग-अलग हैं। कृषि कानूनों में बदलाव का फैसला सरकार ने संसद में जोर जबरदस्ती कराया है। राज्यसभा में मनमाने तरीके से नियमों को तोड़-मरोड़ कर बिना वोटिंग के उसे पास कराया गया है। पर कश्मीर से अनुच्छेद-370 और 35ए हटाने का फैसला संसद के दोनों सदनों की विधिवत मंजूरी से हुआ है। राज्यसभा में भी बहुमत के साथ इसे पास किया गया। कांग्रेस की तरह उदार, धर्मनिरपेक्ष, प्रगतिशील राजनीति करने वाली कई पार्टियों ने सरकार के प्रस्ताव का समर्थन किया। कांग्रेस खुद भी

वंशवाद कमजोरी नहीं ताकत है

कांग्रेस पार्टी किसी भी और बात के मुकाबले इस बात को लेकर ज्यादा बैकफुट पर है कि उसके नेतृत्व पर वंशवादी होने का आरोप है। यह भाजपा, खासकर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और गृहमंत्री अमित शाह के बनाए एजेंडे की 100 फीसदी सफलता का संकेत है, जो कांग्रेस नेता ऐसा सोच रहे हैं। असलियत यह है कि आम लोगों के लिए राजनीति में या किसी भी कामकाज में वंशवाद कोई मुद्दा नहीं है। उलटे भारत में दुनिया के किसी भी देश के मुकाबले वंशवादी राजनीति को ज्यादा पसंद किया जाता है। परंतु कांग्रेस पता नहीं क्यों इस बात को नहीं समझ रही है। कांग्रेस को यह समझना चाहिए कि वंशवाद की राजनीति उसकी कोई कमजोरी नहीं है और न कोई अपराध है, बल्कि यह एक ताकत है और इसी ताकत से भाजपा को घबराहट है। कांग्रेस के एजेंडे की कोई चिंता भाजपा को नहीं है क्योंकि भाजपा नेताओं के पास अपना ऐसा एजेंडा है, जिसकी काट उनको लगता है कि कांग्रेस के पास नहीं है। भाजपा यह मानती है कि कांग्रेस किसी भी स्थिति में उसके हिंदुत्व के एजेंडे का जवाब देने के लिए मैचिंग एजेंडा नहीं उठा सकती है।

चुप रही। दूसरे, कांग्रेस पार्टी दशकों तक भाजपा को चिढ़ाती रही थी कि उसने अनुच्छेद-370 और अयोध्या में राम मंदिर पर क्या किया। जब इन दोनों पर फैसला हो गया तो अब इतिहास का चक्र उलटा घुमाने का कांग्रेस का प्रयास राजनीतिक रूप से आत्मघाती होगा।

वैचारिक बहस के लिए कहा जा सकता है कि जम्मू-कश्मीर से अनुच्छेद-370 हटाना राज्य के लोगों के अधिकार छीनने जैसा है। यह भी कहा जा सकता है कि यह कश्मीरियत पर हमला है, जिसकी बात भाजपा के पहले प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी करते थे और मौजूदा प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी भी करते हैं। लेकिन कांग्रेस कोई बौद्धिक, वैचारिक संगठन नहीं है। वह एक राजनीतिक दल है, जिसे व्यावहारिक व चुनावी राजनीति करनी है। व्यावहारिक व चुनावी राजनीति में जम्मू-कश्मीर में पांच अगस्त 2019 से पहले की स्थिति बहाल करने की मांग करना आत्मघाती है। भाजपा पिछले कई बरसों के प्रचार और सोशल मीडिया की अपनी ताकत के दम पर कांग्रेस को विभाजनकारी साबित करने के प्रयास में लगी है। अगर कांग्रेस लोकप्रिय धारणा को समझे बगैर जम्मू-कश्मीर की प्रांतीय पार्टियों के साथ खड़ी होती है तो जम्मू-कश्मीर में भी उसे नुकसान होगा और देश में भी नुकसान उठाना होगा।

कांग्रेस को इस मुद्दे का जम्मू-कश्मीर में भी फायदा नहीं होगा क्योंकि अगर इस मुद्दे पर राजनीति होती है तो इसका प्रतिनिधित्व करने वाली पार्टियां नेशनल कांफ्रेंस और पीडीपी हैं, जिनके नेता महीनों तक जेल में बंद रहे हैं। राज्य की जनता उनके साथ खड़ी होगी। सो, राज्य में तो फायदा नहीं होगा उलटे देश के बाकी हिस्सों में कांग्रेस के विभाजनकारी होने और मुस्लिमपरस्त होने की धारणा मजबूत होगी। कश्मीर के मसले पर कांग्रेस को लोकप्रिय भावना का ध्यान रखना होगा। इसे समझकर ही कांग्रेस के नेताओं ने 5 अगस्त 2019 के बाद कभी इस पर कोई आंदोलन खड़ा करने या इसका विरोध करने का प्रयास नहीं किया। कांग्रेस के तमाम बड़े नेता या तो इस पर चुप रहे या ज्यादा से ज्यादा इस फैसले के तरीके का विरोध किया। जब पहले दिन इसका विरोध नहीं किया तो अब एक साल बाद अगर वह क्षेत्रीय पार्टियों के एजेंडे में फंसती है तो उसे नुकसान होगा।

कांग्रेस को यथास्थिति की बहाली की बजाय मौजूदा स्थिति में क्या बेहतर हो सकता है, उस पर ध्यान देना चाहिए। जम्मू-कश्मीर में विधानसभा बहाल हो, राष्ट्रपति शासन खत्म हो, लोकतांत्रिक तरीके से चुनी हुई सरकार आए, कश्मीरियत की रक्षा हो, आतंकवाद खत्म हो, कश्मीर देश की मुख्यधारा से जुड़े और वहां विकास शुरू हो, इसका प्रयास कांग्रेस को करना चाहिए। कश्मीर के लोग खुद भी आतंकवाद से उबे हुए हैं और उनको समझ में आ गया है कि पाकिस्तान का दखल उनके जीवन का भला नहीं कर रहा है। बाकी देश में तो खैर यह माहौल है ही कि कश्मीर में एक ऐतिहासिक गलती को दुरुस्त किया गया है। अनुच्छेद-35ए वैसे भी कई संवैधानिक प्रावधानों के उलट था और महिलाओं, दलितों सहित कई वर्गों के मौलिक अधिकार का उल्लंघन करता था। ऊपर से वह प्रावधान सरकार के एक कार्यकारी आदेश के जरिए लागू किया गया था। इसलिए उसके हटने का स्वागत होना चाहिए। रही बात अनुच्छेद-370 की तो उसकी उपयोगिता बौद्धिक बहस का विषय हो सकती है।

कांग्रेस को रहना होगा सतर्क

जिस राजनीति में भाजपा माहिर है उस राजनीति में कांग्रेस उसे किसी कीमत पर नहीं हरा सकती है। जैसे जिस राजनीति में इस देश की क्षेत्रीय पार्टियां माहिर हैं उस राजनीति में उनको न कांग्रेस हरा सकती है और न भाजपा। सो, कांग्रेस को दो बातें गांठ बांधनी होंगी। पहली बात तो यह कि वह धर्म और सांप्रदायिकता की राजनीति में भाजपा को नहीं हरा सकती है। इस राजनीति में भाजपा पहले भी माहिर थी और अब तो उसके पास इस राजनीति के चैंपियन खिलाड़ी हैं। दूसरी बात यह है कि कांग्रेस को अपनी ताकत पहचाननी होगी। उसकी ताकत जाति और धर्म की राजनीति में नहीं है। उसने जाति की राजनीति करने वाली पार्टियों का साथ देकर ही तो अपना वोट आधार गंवाया है और अब धर्म की राजनीति में कूद पर बचा-खुचा आधार भी खोने का खतरा मोल ले रही है। उसे आजादी की लड़ाई के मूल्यों पर आधारित नए सिद्धांत गढ़ने चाहिए। उसे समावेशी, धर्मनिरपेक्ष और उदार लोकतांत्रिक मूल्यों की ही राजनीति करनी चाहिए। इन तीन मूल्यों पर वह मौजूदा समय की समस्याओं को पहचान कर उनका समाधान पेश कर सकती है।

कांग्रेस की राजनीति में निरंतरता और लक्षित हमले के खतरे को भाजपा समझ रही है। तभी खुद प्रधानमंत्री ने कांग्रेस पर हमले की जिम्मेदारी संभाली है। वे आमतौर पर चुनावी सभाओं में कांग्रेस पर हमला करते हैं पर पिछले दो हफ्ते में संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा वाले भाषण को छोड़कर हर वर्चुअल सम्मेलन में उन्होंने कांग्रेस को निशाना बनाया। कांग्रेस पर इस हमले का एक तात्कालिक कारण कृषि से जुड़े कानूनों को लेकर कांग्रेस की सक्रियता भी है। कांग्रेस ने नरेंद्र मोदी की सरकार को निर्णायक मात एक ही मामले में दी है और वह मामला भी कृषि से जुड़ा था। सरकार ने भूमि अधिग्रहण कानून को बदलने की पहल की थी, जिसके विरोध में कांग्रेस ने ऐसा आंदोलन खड़ा किया कि सरकार को पीछे हटना पड़ा था। अब एक बार फिर किसान के मामले में कांग्रेस आंदोलन को हवा दे रही है, यह सरकार के लिए चिंता की बात है।

कांग्रेस की राज्य सरकारों को अस्थिर करने या पार्टी के अंदर बगावत के प्रयास भी कारगर साबित नहीं हुए हैं। हमलों की निरंतरता और लोगों से जुड़े विषयों को उठाने से कांग्रेस पार्टी और राहुल गांधी को गंभीरता से लिया जाने लगा है। यह इस बात से भी जाहिर होता है कि पिछले डेढ़-दो साल से राहुल गांधी को पप्पू साबित करने वाला कोई नया वीडियो नहीं आया है। पुराने वीडियो ही सरकुलेट हो रहे हैं और उनका बहुत असर नहीं हो रहा है। इसका मतलब है कि उनके उठाए मुद्दों के तार आम लोगों से जुड़ गए हैं। उनको नासमझ और अगंभीर नेता साबित करने वाली जितनी बातें सोशल मीडिया में डाली गई हैं उससे ज्यादा बातें उनको गंभीर नेता साबित करने वाली आ गई हैं। कोरोना और अर्थव्यवस्था को लेकर की गई उनकी सटीक भविष्यवाणियों ने उनकी छवि सुधारने में बड़ी भूमिका निभाई है। तभी वे और उनकी पार्टी एक गंभीर राजनीतिक चुनौती के तौर पर उभरे हैं और यही बात सरकार व भाजपा दोनों को परेशान कर रही है।

● दिल्ली से रेणु आगाल

किसानों के लिए नया कानून

छत्तीसगढ़ में राज्य सरकार ने कृषि उपज मंडी कानून में बदलाव कर दिया है। विधानसभा से पारित यह विधेयक राज्यपाल को भेजा जा रहा है। अगर राज्यपाल अनुसूईया उइके ने विधेयक पर हस्ताक्षर कर दिए तो वह कानून बन जाएगा। नए कानून में सरकार ने निजी मंडियों, गोदामों और खाद्य प्रसंस्करण कारखानों को डीम्ड मंडी घोषित करने का प्रावधान कर दिया है। इस नई व्यवस्था से निजी मंडियों पर सरकारी नियंत्रण बढ़ जाएगा। सरकार की कोशिश है कि जहां कहीं भी कृषि उपजों की खरीदी-बिक्री हो, वहां मंडी कानून लागू हो ताकि किसानों को धोखाधड़ी से बचाया जा सके।

विधेयक पेश करते हुए कृषि एवं जल संसाधन मंत्री रविंद्र चौबे ने दावा किया है कि केंद्र सरकार के नए कानूनों से कृषि व्यवस्था में पूंजीपतियों का नियंत्रण बढ़ जाएगा। इसकी वजह से महंगाई बढ़ने, समर्थन मूल्य में धान खरीदी और सार्वभौमिक वितरण प्रणाली के प्रभावित होने की आशंका है। छत्तीसगढ़ कृषि उपज मंडी कानून में प्रस्तावित संशोधन से गरीबों, मजदूरों और उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा हो सकेगी। हालांकि, विशेषज्ञों की राय कुछ और आ रही है। विशेषज्ञों का कहना है कि राज्य सरकार केंद्र के जिन प्रावधानों को छत्तीसगढ़ में निष्प्रभावी करने के दावे के साथ यह विधेयक लाई है, उन्हें तो छुआ तक नहीं गया है। छत्तीसगढ़ किसान-मजदूर महासंघ के तेजराम विद्रोही, रूपन चंद्राकर, जुगनू चंद्राकर ने भी दावा किया है कि यह विधेयक किसानों को बहलाने के लिए लाया गया है। बेहतर होता कि पंजाब की तर्ज पर न्यूनतम समर्थन मूल्य में खरीदी को लेकर एक कड़ा कानून लाया जाता, जिसमें एमएसपी से कम की खरीदी पर संबंधित व्यापारिक प्रतिष्ठान, कारपोरेट और मंडी अधिकारियों पर आपराधिक प्रकरण दर्ज करने का प्रावधान होता।

छत्तीसगढ़ स्वाभिमान मंच के अध्यक्ष राजकुमार गुप्त ने कहा, डीम्ड मंडी घोषित करने, उपजों के परिवहन की निगरानी और जब्ती करने, निजी मंडी के भंडारण की जांच करने, जानकारी छुपाने या गलत जानकारी देने पर 3 माह की सजा का प्रावधान करने से किसानों को कोई लाभ नहीं होगा। मंच ने कहा, न्यूनतम समर्थन मूल्य की गारंटी न देकर सरकार ने किसानों की भावनाओं को आहत किया है। मंच ने न्यूनतम मूल्य की स्पष्ट गारंटी देने वाले कानूनी प्रावधानों की मांग की है। मुख्यमंत्री भूपेश बघेल ने कहा- संघीय व्यवस्था है। इसके तहत संसद में जो कानून पारित होता है तो समवर्ती सूची वाले विषयों पर केंद्र का कानून ही मान्य होगा, हम उसे टच नहीं कर रहे हैं। हमारी कोशिश है कि उन कानूनों से छत्तीसगढ़ के किसानों का नुकसान न हो।

तीन केंद्रीय कानूनों में ऐसी व्यवस्था

कृषक उपज व्यापार और वाणिज्य-संवर्धन और सरलीकरण कानून-पैनकार्ड धारक कोई भी व्यक्ति, कंपनी, सुपर मार्केट किसी भी किसान का माल किसी भी जगह पर खरीद सकते हैं। कृषि माल की बिक्री मंडी परिसर में होने की शर्त को हटा दिया गया है। कृषि माल की जो खरीद मंडी से बाहर होगी, उस पर किसी भी तरह का टैक्स या शुल्क नहीं लगेगा। खरीददार को तीन दिन के अंदर किसानों का भुगतान करना होगा। विवाद होने पर एसडीएम इसका समाधान करेंगे। पहले बातचीत से समाधान की कोशिश होगी। एसडीएम के आदेश की अपील कलेक्टर के यहां होगी। आवश्यक वस्तु अधिनियम-1955 में इस कानून से व्यापारियों द्वारा कृषि उत्पादों के एक सीमा से अधिक भंडारण पर रोक लगा दी गई थी। अब आलू, प्याज, दलहन, तिलहन व तेल के भंडारण पर लगी रोक को हटा लिया गया है। कृषि (सशक्तिकरण और संरक्षण) कीमत आश्वासन और कृषि सेवा करार कानून-इस कानून से किसानों और निजी कंपनियों के बीच में कांट्रेक्ट फार्मिंग का रास्ता खोला गया है। कृषि वैज्ञानिक और सरकार के पूर्व कृषि सलाहकार डॉ. संकेत ठाकुर कहते हैं कि राज्य सरकार का विधेयक केंद्र सरकार के द्वारा पारित किए गए 3 नए किसान कानूनों का ना केवल अनुमोदन करता है बल्कि उससे आगे बढ़कर निजी-कार्पोरेट्स मंडियों को शासकीय मान्यता देने की प्रक्रिया को आगे बढ़ाता है।

मंडी संशोधन विधेयक में कई प्रावधान किए गए हैं। राज्य सरकार कृषि उपज के क्रय-विक्रय, प्रसंस्करण या विनिर्माण, कोल्ड स्टोरेज, साइलोज, भण्डागार, इलेक्ट्रॉनिक ट्रेडिंग तथा लेन-देन प्लेटफार्म और ऐसे अन्य स्थान अथवा संरचनाओं को डीम्ड मंडी घोषित कर सकेगी। मंडी समिति का सचिव या बोर्ड या मंडी समिति का कोई भी अधिकारी या सेवक और राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित अधिकारी या सेवक, किसी ऐसे व्यक्ति से, जो किसी भी किस्म की अधिसूचित कृषि उपज का व्यापार करता हो उसके रजिस्टर और व्यापार से जुड़े दस्तावेज मांग सकता है।

अधिसूचित कृषि उपज के क्रय-विक्रय से संबंधित लेखा पुस्तकें या अन्य दस्तावेज, प्रारूप गलत पाए जाने पर संबंधित व्यक्ति के विरूद्ध सक्षम अधिकारी वाद दायर कर सकेगा। राज्य सरकार, अधिसूचित कृषि उपज के विक्रय में कृषकों को अपने उत्पाद को स्थानीय मंडी के साथ-साथ प्रदेश की अन्य मंडियों तथा अन्य राज्यों के व्यापारियों को गुणवत्ता के आधार पर पारदर्शी नीलामी प्रक्रिया के माध्यम से बेचकर बेहतर कीमत प्राप्त करने तथा समय पर ऑनलाइन भुगतान हेतु इलेक्ट्रॉनिक ट्रेडिंग प्लेटफार्म की स्थापना कर सकेगी। लेखा-पुस्तकें या अन्य दस्तावेज, प्रारूप में संधारित मात्रा से अधिक या कम अधिसूचित कृषि उपज रखता हो, तो वह दोष सिद्धि पर 3 महीने का कारावास अथवा पांच हजार रुपए तक का जुर्माना अथवा दोनों से दंडित होगा। दोबारा ऐसा होने पर 6 महीने का कारावास और 10 हजार रुपए जुर्माने का प्रावधान होगा।

● रायपुर से टीपी सिंह

नए तूफान की आहट

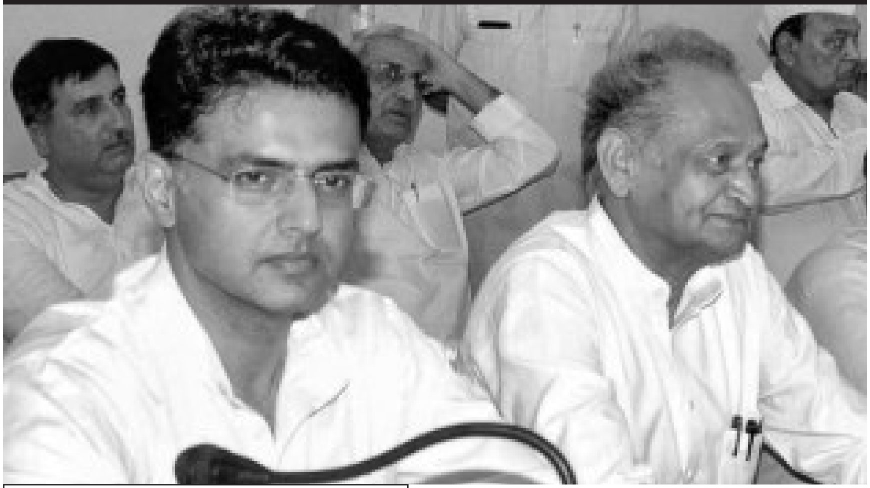

राजस्थान में कांग्रेस की अंतर्कलह एक बार फिर कभी भी सतह पर आ सकती है। इस साल मई-जून में सचिन पायलट और राजस्थान के मुख्यमंत्री अशोक गहलोत के बीच हुआ मनमुटाव इस कदर दिक्कत दे गया कि मामला सुप्रीम कोर्ट तक चला गया। कांग्रेस की अंतरिम अध्यक्ष सोनिया गांधी द्वारा गहलोत और पायलट के बीच के खराब संबंधों को सुलझाने के लिए बनाई गई विशेष समिति की अब तक तीन दौर की बैठकें हो चुकी हैं लेकिन अभी भी स्थिति स्पष्ट नहीं हुई है। कोविड-19 के चलते समिति का काम रुक गया क्योंकि अहमद पटेल और अजय माकन दोनों कोरोना संक्रमित हो गए हैं। राजस्थान के मुख्यमंत्री अशोक गहलोत ने एहतियात के तौर पर लोगों से ना मिलने का फैसला किया है। लेकिन हाल ही की दो घटनाओं से संकेत मिलता है कि परेशानी बढ़ सकती है। सबसे पहले सचिन पायलट के मीडिया मैनेजर लोकेंद्र सिंह के खिलाफ एफआईआर का मामला है, जिसमें **उन्हें अदालत** से राहत मिल गई है, लेकिन राज्य में राजनीतिक संकट के बीच जैसलमेर में एक होटल में रहने के दौरान 'कांग्रेस विधायकों के फोन टैपिंग' पर रिपोर्टिंग के लिए एफआईआर की गई थी।

आईपीसी की धारा 505 (1), 505 (2), 120 बी और सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम की धारा 76 के तहत एफआईआर की गई है। दूसरा मुद्दा राजस्थान लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में मंजू शर्मा की नियुक्ति है। वह कुमार विश्वास की पत्नी हैं और विश्वास ने अमेठी में राहुल गांधी के खिलाफ चुनाव लड़ा था और पायलट कैंप के कुछ लोग इसे गहलोत सरकार की ओर से **असंवेदनशीलता** बता रहे हैं। इसके अलावा आयोग के अन्य नए सदस्यों को गहलोत के करीबी लोगों को सौंप दिया गया। ना तो कांग्रेसियों को और न ही पार्टी नेताओं को समझ आ रहा है कि अशोक गहलोत और सचिन पायलट के बीच आखिर रिश्ता क्या है ? केंद्र से आए प्रभारी अजय माकन भी कई दिनों की माथाफोड़ी के बाद भी रिश्तों की गहराई को समझ नहीं पाए। केंद्र द्वारा रचित नाटक का मंचन लंबा चलने वाला है। ऐसे में जिन्होंने मंत्री पद की शपथ के लिए नई पोशाक तैयार करवाई थी, उसको संदूक में बंद कर देना चाहिए।

दरअसल हकीकत यह है कि गहलोत और सचिन के आपस में हाथ मिलवाने के पीछे सभी का फौरी स्वार्थ था। जहां गहलोत बहुमत सिद्ध करने तक कोई कौतक से दूर रहना चाहते थे, वहीं सचिन ग्रुप की मजबूरी अपनी सदस्यता बचाना पहली प्राथमिकता थी। वैसे भी पायलट ग्रुप बुझा हुआ सुतली का बम था। इस गुट की असलियत जगजाहिर हो चुकी थी। इसलिए आलाकमान के सामने नाक रगड़ने के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं बचा था। आलाकमान राजस्थान जैसे बड़े प्रदेश पर भाजपा के कब्जे से आतंकित था। इसलिए ना चाहते हुए भी सचिन के साथ समझौते की रस्म अदायगी की। सभी ने अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर हाथ मिलाने का असफल नाटक का मंचन किया जिसके क्लाइमेक्स में होगी पदों की जोरदार छीना-झपटी और तगड़ी वाली मारकाट। ऐसे में हाथ मिलाने तथा आत्मसम्मान की सारी बात स्वाहा होकर रह जाएगी। तय हुआ था कि दोनों अर्थात् अशोक गहलोत और सचिन पायलट पार्टी हित के लिए परस्पर मिलकर कार्य करेंगे। पार्टी गई तेल लेने। दोनों गुट आपस में शिकस्त देने के लिए एक-दूसरे के मोहरों को पीटने के लिए नित नई चाल रहे हैं। कोई विधानसभा में नहीं आता है तो किसी के द्वारा पीसीसी कार्यालय आने में आनाकानी की जाती है।

राजनीति के जानकारों का मानना है कि सचिन पायलट का इरादा गुरिल्ला युद्ध के जरिए अशोक गहलोत को परेशान कर परास्त करना है। राजीव गांधी की पुण्यतिथि पर पायलट पीसीसी दफ्तर गए तो गहलोत ने अपना पूर्व घोषित कार्यक्रम रद्द कर दिया। इसी तरह नीट आदि की परीक्षा निरस्ती के लिए आयोजित धरने पर अचानक सचिन के पहुंचने से गहलोत खेमे में जबरदस्त मायूसी छा गई। धरनास्थल पर ही सचिन **पायलट जिंदाबाद के नारे लगने से** स्थिति बड़ी विचित्र हो गई। प्रताप सिंह खाचरियावास की तो बोलती ही बंद हो गई। जो कल तक सचिन को नसीहत दे रहे थे, सामने देखकर उस खाचरियावास की घिग्घी बंध गई। मुख्यमंत्री और प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष गोविंद सिंह डोटासरा तो धरना स्थल पर आने की हिम्मत तक नहीं जुटा पाए। क्या इसी को मन मिलना कहते हैं? जिस कांग्रेस को भाजपा से लड़ना चाहिए, वह आपस में ही लड़कर लहूलुहान हो रही है। यह लड़ाई थम जाएगी, इसकी संभावना फिलहाल तो दूर-दूर तक नजर नहीं आ रही है। लड़ाई किसी हद तक तभी थम सकती है जब अशोक गहलोत और सचिन पायलट में से किसी एक को दिल्ली नहीं भेजा जाता। गहलोत मुख्यमंत्री का पद छोड़कर दिल्ली जाने से रहे। ऐसे में सचिन को दिल्ली भेजकर युद्ध पर काफी हद तक काबू पाया जा सकता है। अगर ऐसा नहीं हुआ तो अगले विधानसभा चुनाव में विज्ञापन देने के बाद भी कांग्रेस को प्रत्याशी नहीं मिलेंगे।

● **जयपुर से आर.के. बिन्नानी**

विरोधियों को ऐसे साध सकते थे गहलोत!

अशोक गहलोत के विरोधी एक नेता ने कहा कि इसके जरिए विरोधी नेताओं को विश्वास में लिया जा सकता था। दूसरी ओर गहलोत खेमे के लोगों का कहना है कि पायलट की चुप्पी को नहीं देखा जाना चाहिए क्योंकि वह सरकार के साथ सहयोग कर रहे हैं। एक अंदरूनी सूत्र ने कहा, 'वह यात्रा कर रहे हैं, लोगों से मिल रहे हैं और ट्विटर पर भारी भीड़ की तस्वीरें ट्वीट की जा रही हैं। यह स्पष्ट रूप से अशोक गहलोत के खिलाफ खुद को प्रोजेक्ट करने की कोशिश है। इस तथ्य से कोई इनकार नहीं है कि उनकी महत्वाकांक्षा है और चीजें फिर से खराब हो सकती हैं। केंद्र में कांग्रेस के सूत्रों के अनुसार, सचिन पायलट को आश्वासन दिया गया था, लेकिन बदले में उन्हें गहलोत के खिलाफ नहीं बोलने के लिए कहा गया। अब तक केंद्रीय नेतृत्व को कोई शिकायत नहीं है लेकिन यह अच्छी तरह से पता है कि राजस्थान एक लाक्षागृह पर बैठा है और उसमें कभी भी आग लग सकती है।

जमीन तलाशते राज

एक मोदी समर्थक, शिवसेना का संभावित सहयोगी, एनसीपी के लिए एक उपयुक्त सहयोगी, संभावनाएं ढूंढ़ता एक राजनेता और हिंदुत्व का पैरोकार। महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना (मनसे) के प्रमुख राज ठाकरे ने अपनी पार्टी का चुनावी भविष्य तलाशने की कवायद के दौरान पिछले दो वर्षों में तमाम प्रयोग किए हैं। अब जबकि मुंबई के निकाय चुनावों में 16 महीने बाकी रह गए हैं, मराठी गौरव का अपना चिरपरिचित और आजमाया हुआ राजनीतिक एजेंडा आगे बढ़ाने के साथ ठाकरे एक और राजनीतिक फॉर्मूले पर काम कर रहे हैं- अपने चाचा शिवसेना प्रमुख बाल ठाकरे की तरह ही एक ऐसा 'गॉडफादर' बनना जो लोगों की समस्याओं को सुनता है और उन्हें सुलझाता है।

पिछले महीने ठाकरे मुंबई के डब्बावालों, शहर के मछुआरों, पुस्तकालय प्रतिनिधियों और महिला सेल्फ हेल्प ग्रुप जैसे कई समूहों की परेशानियां जानने और उन्हें राज्य सरकार तक पहुंचाने के लिए विभिन्न प्रतिनिधिमंडलों से मिले। एमएनएस के नेता सोशल मीडिया पर इन बैठकों का जिक्र शिवाजी पार्क स्थित ठाकरे के आवास के संदर्भ में 'कृष्णकुंजवर न्याय मिलतो (कृष्णकुंज में न्याय मिलता है)' और 'मनसे डंका (मनसे का असर)' जैसे हैशटैग के साथ करते हैं, यह ठाकरे को एक ऐसे व्यक्ति के रूप में चित्रित करता है जो जरूरतमंदों की आवाज उठाता है और उन्हें न्याय दिलाता है। पार्टी के नेता स्थानीय दुकानों और बड़ी कंपनियों तक यह संदेश पहुंचाने में भी जुट गए हैं कि मराठी में लेनदेन करें। पार्टी सूत्रों का कहना है कि मनसे फरवरी 2022 में होने वाले बृहन्मुंबई नगर निगम चुनाव के लिए अभी से जमीन तैयार करने में जुट गई है। मनसे के एक वरिष्ठ नेता का कहना है कि मुंबई में शिवसेना के पारंपरिक मतदाता, अगड़ी जाति के मराठी, संभ्रांत वर्ग, पार्टी के भाजपा के साथ गठबंधन तोड़ने और प्रतिद्वंदियों कांग्रेस और राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के साथ हाथ मिलाने के बाद से उससे छिटक गए हैं। मतदाताओं का शिवसेना से मोहभंग होना हमारे लिए एक अच्छा मौका है।

राजनीतिक टिप्पणीकार हेमंत देसाई का मानना है कि व्यापक परिदृश्य में तो राज ठाकरे अभी यह तय ही नहीं कर पाए हैं कि क्या राजनीतिक रुख अपनाएं। देसाई ने कहा, 'पूरे कोरोना संकट के दौरान न तो उन्होंने सख्ती के साथ शिवसेना की आलोचना की और न ही भाजपा की ओर झुकाव माने जा रहे अपने नए रुख के अनुरूप हिंदुत्ववादी एजेंडे पर ही मजबूती से आगे बढ़ते दिखे। लेकिन मुंबई में निकाय चुनाव उनका तात्कालिक लक्ष्य है। पार्टी अब शिवसेना के मराठी जनाधार पर नजर गड़ाए हुए है जिसकी छवि कांग्रेस के साथ गठबंधन के बाद ज्यादा धर्मनिरपेक्ष मानी जाने लगी है।

मनसे ने पिछले तीन साल में खुद को स्थापित करने की कवायद में कई बार अपने राजनीतिक रुख में अप्रत्याशित बदलाव किए हैं। 2017 के बीएमसी चुनाव के दौरान पार्टी ने अपनी प्रतिद्वंदी शिवसेना को मुंबई में बिना शर्त साथ चुनाव लड़ने का प्रस्ताव दिया। हालांकि, शिवसेना ने इस प्रस्ताव को कोई तवज्जो नहीं दी। फिर 2019 के लोकसभा चुनाव में राज ठाकरे ने प्रधानमंत्री मोदी की तीखी आलोचना करनी शुरू कर दी जबकि 2014 में उन्होंने उनकी उम्मीदवारी का पुरजोर समर्थन किया था। यहां तक कि उन्होंने एनसीपी अध्यक्ष शरद पवार के साथ नजदीकियां बढ़ाना तक शुरू कर दिया। 2018 में ठाकरे ने पुणे में पवार के साथ एक सार्वजनिक संवाद आयोजित किया, औरंगाबाद-मुंबई की उड़ान के दौरान एक घंटे तक उनकी मुलाकात चली और साथ ही एनसीपी प्रमुख के साथ उनकी कुछ अनौपचारिक बैठकें भी हुईं।

2019 की शुरुआत में ठाकरे ने एक संभावित गठबंधन पर पिछले दरवाजे से बातचीत के सिलसिले में एनसीपी नेता और शरद पवार के भतीजे अजित पवार के साथ बैठक भी की थी। हालांकि, एनसीपी नेता मनसे को साथ लेने को तैयार थे लेकिन कांग्रेस नेताओं ने यह कहते हुए मुखर रूप से इसका विरोध किया कि ऐसी पार्टी को शामिल करने का सवाल ही नहीं उठता जो मुंबई की उत्तर भारतीय आबादी, जो कांग्रेस का प्रमुख वोट बैंक है, के खिलाफ उग्र रवैया दर्शाती रही है। पार्टी ने अंततः 2019 का लोकसभा चुनाव नहीं लड़ा लेकिन तथ्यों और शोध के आधार पर पत्रकारिता वाली राह अपनाते हुए भाजपा के खिलाफ आक्रामक अभियान चलाकर अपनी छाप छोड़ी। मनसे ने उस साल विधानसभा चुनाव लड़ा और जनता के सामने खुद को एक मजबूत विश्वसनीय विपक्ष के रूप में पेश किया लेकिन उसे केवल एक सीट से ही संतोष करना पड़ा।

● बिन्दु माथुर

मनसे का गिरता ग्राफ

2006 में अपने पुत्र उद्धव को उत्तराधिकारी बनाने के बाल ठाकरे के फैसले के बाद राज ठाकरे ने शिवसेना छोड़कर मनसे का गठन किया था। इसने शुरू में 'मराठी मानुष' और 'मराठी गौरव' की विचारधारा को शिवसेना की तुलना में ज्यादा आक्रामक ढंग से अपनाकर तात्कालिक सफलता हासिल की और एक समय तो दादर और माहिम के जैसे गढ़ उससे छीनने में सफल रही। 2009 के लोकसभा चुनावों में इसने 11 उम्मीदवार मैदान में उतारे, जिनमें से कोई भी जीता तो नहीं लेकिन पार्टी कई सीटों पर शिवसेना का समीकरण बिगाड़ने वाले दल के रूप में सामने आई। उसी साल विधानसभा चुनाव में मनसे ने 143 सीटों पर चुनाव लड़ा और अपने इस पहले प्रयास में उसके 13 विधायक महाराष्ट्र विधानसभा पहुंचे। हालांकि, इसके तुरंत बाद पार्टी की किस्मत की बाजी पूरी तरह उलट गई। 2014 के लोकसभा चुनावों में पार्टी ने 10 उम्मीदवार मैदान में उतारे, सभी की जमानत तक जब्त हो गई। उसी साल विधानसभा चुनावों में पार्टी ने बड़ी अपेक्षाओं के साथ 288 में से 219 सीटों पर किस्मत आजमाई जिसमें से सिर्फ एक प्रत्याशी जीता और 209 सीटों पर जमानत जब्त हो गई। 2019 में पार्टी ने लोकसभा चुनाव में हाथ न आजमाने का फैसला किया, उसने 101 सीटों पर विधानसभा चुनाव लड़ा और एक बार फिर सिर्फ एक सीट पर जीत हासिल कर पाई।

अपने ही काफी हैं!

पहले हाथरस गैंगरेप और अब बलिया गोलीकांड, उप्र के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ को लगातार अपनों की वजह से भी फजीहत हो रही है। वरना, गैरों में कहां दम नजर आ रहा था। राजनीतिक विरोधियों में फ्रंट पर कांग्रेस महासचिव प्रियंका गांधी वाड्रा होती जरूर हैं, लेकिन उनसे बड़े राजनीतिक विरोधी अखिलेश यादव और मायावती की सक्रियता तो रस्मअदायगी भर सीमित देखी गई है। हाल फिलहाल तो यही हाल है। उप्र के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के शासन में कानून व्यवस्था बनाए रखना सबसे बड़ा चैलेंज बना हुआ है। एनकाउंटर और किसी अपराध के आरोपी को ले जा रही गाड़ियों के चलते-चलते पलट जाने या हादसे का शिकार होने को छोड़ दें तो उप्र में छोटे-छोटे मामले भी चुनौती बनते जा रहे हैं।

जैसे हाथरस के मामले में थाने के लेवल पर ही कानून के हिसाब से एक्शन हो जाता तो इतना तूल नहीं पकड़ता और पीड़ित पक्ष के लिए भी राहत की बात होती। ठीक वैसे ही बलिया गोलीकांड भी टाला जा सकता था। जहां मौके पर पहले से प्रशासनिक अधिकारी और सीनियर पुलिस अफसर **फोर्स के साथ** मौजूद हो, वहां एक शख्स ताबड़तोड़ फायरिंग भी करे और भाग भी जाए संभव नहीं लगता। कम से कम उप्र की जिस पुलिस की पीठ पर योगी आदित्यनाथ का मजबूत हाथ होने के बाद तो ऐसा बिलकुल नहीं लगता, लेकिन ये सब हो रहा है और यही हकीकत है। मतलब, कहीं न कहीं लोचा है और ऐसे कई मामले हैं जिनमें राजनीतिक हस्तक्षेप महसूस किया गया है। हाथरस के मसले पर एक इंटरव्यू में हुए सवाल के जवाब में केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह कहते हैं, 'हाथरस के मामले में गलतफहमी थाना के स्तर पर थी, न कि सरकार के स्तर पर।' हाथरस गैंगरेप और बलिया गोलीकांड दोनों ही मामलों में अफसरों ने जो किया वो तो किया ही, बलिया के केस में भाजपा विधायक सुरेंद्र सिंह ने अपनी ही सरकार की किरकिरी करा डाली है। अगर सुरेंद्र सिंह ने थोड़ी बहुत बयानबाजी की होती तो भी चल जाता, क्योंकि ऐसा वो अक्सर करते रहते हैं। हत्या के मुख्य आरोपी के बचाव में तो भाजपा विधायक ने सारी हदें ही पार कर डाली हैं।

किसी भी राज्य में कानून व्यवस्था कैसे लागू हो सकती है जब सत्ताधारी दल का विधायक ही हत्या के आरोपी के पक्ष बयानबाजी कर रहा हो और उसके खिलाफ एक्शन न हो इसलिए सड़क पर उतरने की धमकी दे रहा हो! बलिया गोलीकांड पर सबसे पहले सुरेंद्र सिंह का बयान आया कि हर क्रिया की प्रतिक्रिया होती है। क्रिया होगी तो प्रतिक्रिया भी होगी। ऐसा बोलकर भाजपा विधायक ने शुरू में ही संकेत दे दिए थे कि कानून हाथ में लेने को लेकर उनका क्या नजरिया है। जब कोई जनप्रतिनिधि किसी एक पक्ष के बारे में ऐसी बात करे तो इलाके की जनता को इंसाफ की क्या उम्मीद करनी चाहिए। खासकर तब जब लोग विधायक के स्वजातीय न हों।

न्यूटन के नियम के जरिए हत्या को सही ठहराने के बाद सुरेंद्र सिंह की नई दलील आई- जिस पर हत्या का आरोप लगा है उसने आत्मरक्षा में गोली चलाई है। वैसे भाजपा के बलिया जिलाध्यक्ष और योगी सरकार के एक मंत्री इस बात से इंकार करते रहे कि हत्या के आरोपी से भाजपा का कोई संबंध नहीं है, लेकिन सुरेंद्र सिंह ने डंके की चोट पर कहा कि धीरेंद्र प्रताप सिंह ने 2017 के विधानसभा चुनाव और 2019 के आम चुनाव में भाजपा के लिए काम किया था। धीरेंद्र प्रताप सिंह के मौके से फरार हो जाने के बाद 17 अक्टूबर को भाजपा विधायक सुरेंद्र सिंह रेवती थाने पहुंचकर जिसकी हत्या हुई है उसके परिवार के लोगों के खिलाफ शिकायत दर्ज कराने पहुंचे थे और सरेआम धमकी दी कि ऐसा न होने पर वो धरने पर बैठ जाएंगे।

भाजपा विधायक के बेटे विद्याभूषण सिंह ने भी सीधे-सीधे मुख्यमंत्री को चेतावनी दे डाली। विद्याभूषण ने फेसबुक पोस्ट में लिखा- 'योगी जी, अब बर्दाश्त के बाहर हो रहा है। आपकी शह पर प्रशासन अत्याचार का अंत कर रहा है। मजबूर होकर सड़क पर उतरेंगे। भाजपा विधायक धीरेंद्र प्रताप सिंह के परिवार से मिलने गए तो फूट-फूटकर रोए भी और उसका वीडियो भी वायरल हुआ है। किसी परिवार से किसी की भी सहानुभूति हो सकती है। ये आपसी रिश्ते का मामला है। धीरेंद्र प्रताप सिंह का भाजपा विधायक का करीबी होना भी कोई गलत बात नहीं है, वैसे भी वो कोई पेशेवर अपराधी नहीं है, लेकिन ये तो सच है कि उसके ऊपर हत्या जैसे संगीन जुर्म का आरोप है। आरोपी तो आरोपी होता है, चाहे वो किसी का कितना ही सगा क्यों न हो। वो कानून की नजर में एक आरोपी है और अदालत में उसे अपने बचाव का पूरा अधिकार भी है और मौका भी दिया जाता है, ये भारतीय न्याय व्यवस्था की सबसे बड़ी बात है। हाथरस और बलिया के अपराध की प्रकृति अलग-अलग जरूर है, लेकिन उस पर प्रशासन के एक्शन लेने का तौर तरीका एक जैसा ही है। हाथरस में भी जातीय तनाव पैदा हुआ। बाद में तो इसे बड़ी साजिश भी बताई गई। अभी बलिया के मामले में ऐसी कोई जानकारी सामने नहीं आई है।

● **लखनऊ से मधु आलोक निगम**

नेताओं और अफसरों के संपर्क में था आरोपी

बलिया गोलीकांड में फरार मुख्य आरोपी धीरेंद्र प्रताप सिंह को लखनऊ में एसटीएफ ने गिरफ्तार कर लिया है। धीरेंद्र सिंह की तलाश में पुलिस की 10 टीमें जगह-जगह दबिश डाल रही थीं। पुलिस के मुताबिक, आरोपियों के खिलाफ एनएसए और गैंगस्टर एक्ट के तहत कार्रवाई की जाएगी। धीरेंद्र के दो भाइयों सहित कुछ लोगों को पहले ही गिरफ्तार किया जा चुका है। बताते हैं कि धीरेंद्र फरार होने के बाद से ही सरेंडर की कोशिश में था और इसके लिए कुछ करीबी नेताओं और उसने पुलिसवालों से संपर्क भी किया था। वकीलों के जरिए सरेंडर का पूरा प्लान भी तैयार था, लेकिन ऐन मौके पर एसटीएफ ने दबोच लिया। एसटीएफ के आईजी अमिताभ यश ने बताया, धीरेंद्र सिंह और उसके साथियों को लखनऊ से गिरफ्तार किया गया है। एक अज्ञात स्थान पर उनसे पूछताछ की जा रही है। धीरेंद्र सिंह के गुर्गों के कब्जे से हथियार बरामद किए गए हैं। घटना के वक्त किस हथियार का इस्तेमाल किया गया एसआईटी इसकी जानकारी जुटा रही है।

पार्टियों को सता रहे बागी

बदस्तूर जारी रहा पाला बदल का खेल

प्रदेश की सभी पार्टियां दल-बदल के खेल का शिकार हुईं। दरअसल ध्येय तो किसी भी कीमत पर टिकट पाने का होता है, इसलिए इसमें किसी भी तरह का संशय उन्हें पाला बदलने के लिए प्रेरित करता है। तब दलीय प्रतिबद्धता या राजनीतिक आस्था महज दिखावे की वस्तु रह जाती है। इस खेल में कई लोगों को तो मुकाम मिल जाता है जबकि कई दल बदलने के बाद भी उद्देश्य में कामयाब नहीं हो पाते और जिन्हें क्षेत्र में किए काम से अपनी जीत का पूरा भरोसा होता है वे बिना किसी दल के ही रणभूमि में उतर जाते हैं। चूंकि पार्टियों का लक्ष्य भी येन-केन-प्रकारेण चुनाव में विजयश्री हासिल करना होता है, इसलिए उन्हें भी दल-बदल के खेल से गुरेज नहीं होता। स्थिति तो यहां तक आ जाती है कि पिता किसी दल में होता है और पुत्र किसी और पार्टी में। खगड़िया के लोजपा सांसद चौधरी महबूब अली कैसर के पुत्र मो. युसूफ सलाउद्दीन ने राजद का दामन थाम लिया है। कांग्रेस को छोड़कर बाहुबली नेता आनंद मोहन की पत्नी लवली आनंद अपने पुत्र चेतन आनंद के साथ राजद में शामिल हो गईं। मां-बेटे, दोनों को राजद ने अपना प्रत्याशी भी बना दिया। देखा जाए तो 2015 में चुनाव जीत चुके एक दर्जन से अधिक विधायकों ने अपना घर बदल लिया। अब जो किसी न किसी वजह से पार्टी बदलकर चुनाव लड़ेंगे वे तो बागी की ही संज्ञा पाएंगे।

बिहार में तीन चरणों में विधानसभा चुनाव हो रहे हैं। सभी पार्टियों में टिकट वितरण का कार्य पूरा हो चुका है। प्रत्याशियों के नाम सामने आते ही लगभग सभी बड़ी पार्टियों में टिकट के दावेदार रहे नेता बगावत का झंडा उठा रहे हैं। भाजपा नीत राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) हो या राजद की अगुवाई वाला महागठबंधन, सभी दलों के लिए बागी परेशानी का कारण बन गए हैं। कांग्रेस भी इस समस्या से दो-चार हो रही है। दरअसल, इस बार के चुनाव में एक तरह से विकल्पों की भरमार है। इस बार राज्य में चार गठबंधन प्रमुख भूमिका में हैं। एनडीए व महागठबंधन के अलावा पूर्व सांसद राजेश रंजन यादव व पप्पू यादव की अगुवाई वाला प्रगतिशील डेमोक्रेटिक एलायंस (पीडीए) व पूर्व केंद्रीय मंत्री उपेंद्र कुशवाहा वाला ग्रैंड डेमोक्रेटिक सेक्युलर फ्रंट भी चुनाव मैदान में है। इनके अलावा एनडीए से दोस्ताना लड़ाई की मुद्रा में पूर्व केंद्रीय मंत्री स्वर्गीय रामविलास पासवान के पुत्र चिराग पासवान के नेतृत्व वाली लोक जनशक्ति पार्टी (लोजपा) भी वहां ताल ठोक रही है जहां जदयू के उम्मीदवार हैं। ऐसे तो कोई पार्टी किसी दल के बागी को टिकट देने से गुरेज नहीं कर रही, यदि उस व्यक्ति की जीत की संभावना किसी भी समीकरण के अनुरूप थोड़ी सी भी शेष रह गई हो। संभावनाओं के इस खेल में जिसे जहां टिकट की संभावना दिख रही है, वह वहां चला जा रहा है। लोजपा बागियों के लिए पनाहगार बन गई है। बागियों के लिए भी यह पहली पसंद है जिसकी वजह इस पार्टी के पास इसका अपना पांच प्रतिशत पुख्ता वोट बैंक का होना है।

ऐसे लोगों की तादाद काफी है जिन्होंने अपनी पार्टियों में टिकट नहीं मिलने की वजह से लोजपा का दामन थाम लिया है। लोजपा ने भी ऐसे विक्षुब्धों का दिल खोलकर स्वागत किया है। स्थिति का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि अभी तक घोषित 95 सीटों में लोजपा ने भाजपा के 21, जदयू के 11, कांग्रेस तीन एवं राजद व रालोसपा के दो-दो असंतुष्टों को अपना उम्मीदवार बनाया है। अपनी बातों के उलट लोजपा ने पांच ऐसी जगहों पर भी प्रत्याशी दे दिया है जहां से जदयू नहीं, भाजपा के उम्मीदवार मैदान में हैं। लोजपा में आए बागियों में सबसे प्रमुख नाम भाजपा के प्रदेश उपाध्यक्ष रहे राजेंद्र सिंह व पूर्व विधायक रामेश्वर चौरसिया का है। सब्र की परीक्षा में आखिरकार ऐसे प्रमुख सिपाहसलारों की राजनीतिक आस्था भी जवाब दे गई। इनके अलावा राष्ट्रीय लोक समता पार्टी (रालोसपा) नीत गठबंधन ने जदयू के दो बागी नेताओं को, तो वहीं राजद ने बहुजन समाज पार्टी (बसपा) व रालोसपा के एक-एक बागी नेताओं को अपना प्रत्याशी घोषित किया है। जदयू के वरिष्ठ नेता व पूर्व मंत्री श्रीभगवान सिंह कुशवाहा व चंद्रशेखर पासवान को लोजपा ने टिकट दिया है, तो वहीं रालोसपा ने जदयू के रणविजय सिंह तथा भाजपा के अजय प्रताप सिंह को उम्मीदवार बनाया है। इसी तरह राजद के अति पिछड़ा प्रकोष्ठ के पूर्व महासचिव सुरेश निषाद को लोजपा ने टिकट दिया है।

जेपी आंदोलन की उपज व सामाजिक न्याय के पुरोधा लालू प्रसाद यादव 1990 से 97 तक बिहार के मुख्यमंत्री रहे। उनकी पत्नी राबड़ी देवी के नेतृत्व में 2005 तक बिहार में उनकी पार्टी राष्ट्रीय जनता दल (राजद) ने शासन किया। चारा घोटाले के मामले में फिलहाल लालू प्रसाद रांची जेल में बंद हैं। वे लोकसभा के पहले सांसद हैं जिन्हें सजा मिलने के कारण सदन की सदस्यता के अयोग्य ठहराया गया। दरअसल इस बार गठबंधन के बदले परिदृश्य के कारण ही यह स्थिति उत्पन्न हुई है। हर हाल में जीत के समीकरणों को ध्यान में रखते हुए सभी पार्टियां अपने-अपने प्रत्याशी तय कर रही है। 2015 में भाजपा 157 सीटों पर लड़ी थी लेकिन इस बार महज 110 पर ही लड़ेगी। इस परिस्थिति में तो 47 नेताओं को टिकट से स्वाभाविक तौर पर वंचित होना ही था। जदयू के साथ भी कमोबेश यही स्थिति है। राजद ने भी अपने कोटे की 144 सीटों में 18 विधायकों को टिकट से वंचित कर दिया है। आंकड़ों में देखा जाए तो 2015 की तुलना में इस बार राजद में 29 नए चेहरे दिखेंगे। इसी चक्कर में सभी बड़े राजनीतिक दलों ने अच्छी-खासी संख्या में वर्तमान विधायकों का टिकट काट दिया है। किसी भी दल का दामन थामने के अलावा अच्छी-खासी संख्या उन उम्मीदवारों की भी है जो बतौर निर्दलीय मैदान में हैं। इनके अलावा भी कई पार्टियों के संगठन के लोग भी बगावत कर मैदान में कूद चुके हैं।

● विनोद बक्सरी

दमन की घातक अनदेखी

पाकिस्तान में हिंदू होना अभिशाप है। एक यंत्रणा है और सामाजिक अपराध भी। हिंदू और सभी गैर-मुस्लिम पाकिस्तान में अल्पसंख्यक हैं, लेकिन उनका उत्पीड़न लगातार जारी है। पाकिस्तान की संसदीय समिति ने हिंदुओं पर हो रहे अत्याचार और जबरदस्ती के धर्मांतरण पर सनसनीखेज रिपोर्ट दी है। सीनेटर अनवार उल हक की अध्यक्षता में गठित समिति ने स्वीकार किया है कि पाकिस्तानी सरकार धार्मिक अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करने में पूरी तरह विफल रही है। समिति ने इसकी जांच के लिए सिंध प्रांत के कई क्षेत्रों का दौरा भी किया है। हक ने जबरन धर्मांतरण के आरोप को सही पाया है। इसमें बहला-फुसला कर कराए गए धर्मांतरण भी हैं। समिति ने सुझाव भी दिया है कि हिंदू लड़कियों का जबरन धर्म परिवर्तन रोका जाना चाहिए। संसदीय समिति की रिपोर्ट गंभीर है। यह अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी के लिए भी गंभीर चुनौती है। पाकिस्तान में हिंदू उत्पीड़ित किए जा रहे हैं। उनकी संख्या भी लगातार घट रही है। वर्ष 1941 की जनगणना के अनुसार अविभाजित भारत के पाकिस्तान वाले क्षेत्र में 14 प्रतिशत हिंदू थे और बांग्लादेशी क्षेत्र में 28 प्रतिशत। अब पाकिस्तान में हिंदू आबादी लगभग 1.5 प्रतिशत ही रह गई है। इस आधार पर अगले 65-70 वर्ष में पाकिस्तान में नाम के ही हिंदू बचेंगे।

पाकिस्तान स्वाभाविक राष्ट्र नहीं है और न ही संविधान शासित राज्य। उसकी सेना, पुलिस और समाज का दृष्टिकोण हिंदू विरोधी हैं। हिंदुओं और भारतवासियों से घृणा करना उनकी प्रकृति है। वहां ईशनिंदा कानून है। अल्लाह और पैगंबर के विरुद्ध टिप्पणी का अर्थ जीवन से हाथ धोना है। पुलिस फर्जी आरोप लगाकर गैर-मुस्लिमों का उत्पीड़न करती है। अल्पसंख्यक अपनी संस्कृति, आस्था और विश्वास के अनुसार जीवन-यापन नहीं कर सकते। लड़कियां उठा ली जाती हैं। उनका धर्मांतरण होता है। घर के लोगों की कोई नहीं सुनता। लड़कियों से जबरिया सहमति के बयान दिलाए जाते हैं। ये मामले पाकिस्तानी जनजीवन का हिस्सा हैं। हिंदू परिवार और लड़कियां मुख्य निशाने पर हैं।

गैर-इस्लामी विश्वास के लिए पाकिस्तान में कोई जगह नहीं। संयुक्त राष्ट्र का मानवाधिकार चार्टर पाक को मान्य नहीं है। कन्याओं के अपहर्ता और अल्पसंख्यकों के उत्पीड़कों का ऐलान स्पष्ट है कि 'इस्लाम कुबूल करो या मरो।' पाकिस्तान में इन दो में से किसी एक विकल्प की ही अनिवार्यता है। इतिहासवेत्ता सर जदुनाथ सरकार ने 'हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब-खंड तीन' में लिखा है, 'एक गैर-मुस्लिम इस्लामी राज्य का नागरिक नहीं हो सकता। वह इस्लामी राज्य में एक इकरारनामे के तहत रहता है। उसे राजनीतिक-सामाजिक अधिकारों से वंचित रहना पड़ता है।' वर्ष 2001 में तालिबान ने भी ऐसी घोषणाएं की थीं।

तालिबान ने धमकी दी थी कि हिंदू विशेष प्रकार की पगड़ी पहनकर ही भ्रमण कर सकते हैं। वे नया मंदिर नहीं बना सकते। पुराने मंदिर की मरम्मत नहीं कर सकते। कई प्रतिष्ठित इस्लामी विद्वानों ने भी 'इस्लाम कुबूल करो या मरो' के सिद्धांत को सही ठहराया था। प्रख्यात शरीय व्याख्याता अबु हनीफा ने बीच का रास्ता निकाला था कि दोनों शर्तों में किसी एक को न मानने पर गैर-मुस्लिम नागरिक 'जिम्मी' की तरह रह सकते हैं। जिम्मी इस्लामी देशों के गैर मुसलमानों की हैसियत बताने वाली संज्ञा है। जिम्मी या गैर मुस्लिम को इस्लामी राज्य का संरक्षण नहीं मिलता है। पाकिस्तानी अल्पसंख्यक जिम्मी से भी गए-गुजरे हैं।

अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी के लिए पाकिस्तान की स्थिति गंभीर रूप में विचारणीय है। दक्षिण एशिया मानवाधिकार समूह के अनुसार वहां प्रतिवर्ष 1,000 महिलाओं का धर्मांतरण हो रहा है। पाकिस्तान हिंदू काउंसिल के अनुसार प्रतिवर्ष 5,000 हिंदू पाकिस्तान छोड़ने के लिए मजबूर किए जा रहे हैं। उत्पीड़न और धर्मांतरण ईसाइयों का भी हो रहा है, परंतु उनके लिए अमेरिकी और यूरोपीय संगठन आवाज उठाते हैं। यह अच्छी बात है, लेकिन संसदीय समिति की भयावह रिपोर्ट के बावजूद भारत के कथित सेक्युलर प्रगतिशील हिंदू उत्पीड़न पर मौन हैं। हिंदू कन्याओं की चीत्कार और दुख उन्हें विचलित नहीं करते। वे रोहिंग्या मुसलमानों पर विलाप करते हैं, लेकिन पाकिस्तान और बांग्लादेश के उत्पीड़ित अल्पसंख्यकों को राहत देने के लिए बने नागरिकता संशोधन कानून यानी सीएए का विरोध करते हैं।

भारत की सभ्यता-संस्कृति का विकास सिंधु घाटी में हुआ था। ऋग्वेद में सिंधु नदी और क्षेत्र के गीत हैं। इसी का विकास हड़प्पा सभ्यता है। यह दुखद है कि जहां हिंदू सभ्यता का विकास हुआ, उसी सिंधु क्षेत्र में हिंदू उत्पीड़न जारी है। यहां हिंदुओं की समाप्ति की आशंका गहरा रही है। वहीं भारत में अल्पसंख्यकों की चर्चा बहुधा चलती है। यहां अल्पसंख्यक राष्ट्रप्रदत्त सभी अधिकारों का आनंद लेते हैं। हमारे संविधान निर्माताओं ने अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए कई प्रावधान किए। भारतीय अल्पसंख्यक सभी क्षेत्रों में बहुसंख्यकों की भांति अपने अधिकारों का उपभोग करते हैं। तब भी यहां के छद्म सेक्युलर अल्पसंख्यक उत्पीड़न के नारे लगाया करते हैं। उन्हें पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों का भयावह उत्पीड़न नहीं दिखाई पड़ता।

● **ऋतेन्द्र माथुर**

संयुक्त राष्ट्र के संकल्प पाकिस्तान पर क्यों लागू नहीं?

अल्पसंख्यकों के हित में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सिविल और राजनीतिक अधिकार संविदा अंगीकृत हुई थी। इसके अनुसार, 'जिन देशों में जातीय, धार्मिक या भाषाई अल्पसंख्यक हैं, उन्हें अपने समूह के सदस्यों के साथ मिलकर अपनी संस्कृति का आनंद लेने, अपने धर्म को मानने और उस पर आचरण करने या अपनी भाषा का प्रयोग करने के अधिकार से वंचित नहीं किया जाएगा।' अल्पसंख्यकों के प्रति विभेद का निवारण और उनके संरक्षण पर संयुक्त राष्ट्र के उप-आयोग का संकल्प (1950) भी पठनीय है, 'अल्पसंख्यकों की रक्षोपाय का उद्देश्य यही था कि जो बहुसंख्यक वर्ग लोकतांत्रिक व्यवस्था के जरिए शासन कर रहा है, वह अल्पसंख्यकों के साथ भेद न करे।' मूलभूत प्रश्न है कि, 'अंतर्राष्ट्रीय संविदा और संयुक्त राष्ट्र के ये संकल्प, पाकिस्तानी अल्पसंख्यकों पर क्यों लागू नहीं हैं?' इस उत्पीड़न पर भारत के कथित प्रगतिशील अपनी राय क्यों नहीं व्यक्त करते।

ट्रंप या बाइडेन?

भारत सचमुच में तटस्थ नहीं रह सकता

जब कोई शीतयुद्ध चल रहा होता है, या नया शुरू होता है जैसा कि अब हो रहा है, तब भारत सचमुच में तटस्थ नहीं रह सकता। इससे नेहरू और इंदिरा के कई प्रशंसक नाराज हो जाएंगे। बस इतना ही है कि नेहरू ने 1962 के बाद अमेरिका को चुनने में काफी देर कर दी, जब कि वे कमजोर हो चुके थे। उनकी बेटी ने रूस को चुना। उनके दौर में कम-से-कम 1969-77 के बीच और 1980-84 के बीच भारत शायद ही गुटनिरपेक्ष था। वे मॉस्को के साथ थीं क्योंकि वे राष्ट्रहित के लिए काम कर रही थीं। ऐसा ही फैसला आज भी किया गया है। भारत इस दिशा में दो दशक से बढ़ रहा है, और अमेरिका ने भी उत्साह दिखाया है। इसमें कुछ व्यवधान आया, खासकर परमाणु संधि के बाद, जब कांग्रेस आलाकमान थका हुआ दिखा और नए रक्षामंत्री एके एंटनी जोखिम लेने से इतना कतराते थे कि 'एक्सरसाइज मालाबार' भी शीतयुद्ध वाले मूड के हिसाब से अपना जज्बा खो बैठा था।

अमेरिकी विदेश मंत्री माइक पोम्पियो और रक्षा मंत्री मार्क एस्पर का भारत दौरा चर्चा का विषय बना हुआ है। ज्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि भारत उनके साथ पींगें क्यों बढ़ा रहा है, जबकि दोनों पक्षों को पता नहीं है कि अमेरिकी राष्ट्रपति का चुनाव कौन जीतेगा? वैसे, तमाम जनमत सर्वे तो यही बता रहे हैं कि डोनाल्ड ट्रंप के जीतने से ज्यादा हारने के ही आसार हैं। सामान्य दौर होता तो परंपरावादी भारतीय 'सिस्टम' फैसला आने का इंतजार करता। लेकिन यह सामान्य समय नहीं है, सिर्फ इसलिए नहीं कि चीन लद्दाख में 6 महीने से जो धरना दिए बैठा है उसे खत्म नहीं कर रहा। यह भारत के लिए भारी चिंता का कारण तो है, लेकिन आला अमेरिकी विदेश और सामरिक नीतिकारों के लिए यह प्राथमिकता का मसला नहीं है। लेकिन पूरी तस्वीर इस तथ्य के कारण बदल जाती है कि चीन केवल वाशिंगटन के लिए ही नहीं बल्कि दुनिया की ज्यादातर राजधानियों, खासकर लोकतांत्रिक देशों की राजधानियों के लिए रणनीतिक चिंता का कारण बन गया है। इनमें ब्रिटेन समेत पूरा यूरोप, जापान, ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड शामिल हैं।

अरब भले कुछ बोल न रहा हो मगर वह एक तरफ ईरान और चीन की दोस्ती पर खौफजादा होकर नजर रखे हुए है, तो दूसरी तरफ पाकिस्तान के साथ चीन का बढ़ता जैविक संबंध भी है और वह तुर्की की तरफ पूरी तरह झुक रहा है जबकि उसके विदेश मंत्री ने सऊदी अरब की खुली आलोचना की। शी जिनपिंग के चीन ने पूरब, पश्चिम, दक्षिण में दहशत की लहर फैला दी है। उत्तर में शायद क्षेत्रीय स्तर पर उसे स्वीकार कर लिया गया है। एकमात्र रूस ही चीन का करीबी और वास्तविक रूप से ताकतवर सहयोगी है। पाकिस्तान माफ करे कि हम उसे इस जमात में नहीं शामिल कर रहे हैं। इसकी वजह है। चीन के साथ उसका रिश्ता दोस्ती से ज्यादा निर्भरता का है।

रूस चीन को ऊर्जा का प्रमुख सप्लायर है और उसे मलक्का जलडमरूमध्य से होने वाले खतरे से बचाता भी है। दोनों के बीच सैन्य संबंध बढ़ रहा है। रूस के पास टेक्नोलॉजी और औद्योगिक आधार है। चीन के पास सेना है, जिसे इसकी जरूरत है और इसे खरीदने का पैसा भी है। नतीजतन, हम चीन की सेना और रूस के उद्योग के बीच एक अनूठा सैन्य-औद्योगिक गठजोड़ बनता देख रहे हैं। यहां गौरतलब बात यह है कि भारतीय वायुसेना को यह मानकर चलना है कि उसे लद्दाख सेक्टर में रूसी एस-400 और स-300 मिसाइलों की चुनौती का सामना करना है। भारत अपनी एस-400 मिसाइलें 2022 में ही जाकर इस्तेमाल कर पाएगा। यह एक नई पेचीदा रणनीतिक वास्तविकता है। पाकिस्तान और उत्तरी कोरिया के रूप में चीन की छत्रछाया में दो ऐसे देश पहले से मौजूद हैं जो परमाणु हथियार से लैस हैं और गैर-भरोसेमंद हैं। इसके साथ पुतिन का रूस उनका साथी है। इस क्षेत्र में संतुलन स्थापित करने वाले केवल दो देश जापान और ऑस्ट्रेलिया पर भारी दबाव डाला जा रहा है। ताइवान को धमकाया जा रहा है, हांगकांग को कब्जे में ले लिया गया है।

अमेरिका के नेतृत्व वाले 'फाइव आइज अलायंस' के देश चिंतित हैं और दुनिया के लिए इस उथल-पुथल वाले साल में एकमात्र चीन ही ऐसी अर्थव्यवस्था होगी, जो वृद्धि दर्ज करेगी। यह इसे अमेरिका के लिए अव्वल द्विपक्षीय रणनीतिक चिंता का कारण बना देता है। ट्रंप और बाइडेन शायद एक ही मसले पर एकमत हैं, कि चीन के खिलाफ मुकाबला करने में कौन ज्यादा सख्त साबित होता है। आज, रणनीतिक स्वायत्तता की परिभाषा ज्यादा तीखी हो गई है। आज इसका अर्थ हो गया है भारत की भौगोलिक अखंडता, संप्रभुता, और क्षेत्रीय हैसियत को चीनी चुनौती को भोथरा करना। 2018 में सिंगापुर में सांग्री-ला डायलॉग में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का भाषण याद आ रहा है, जिसमें उन्होंने रणनीतिक स्वायत्तता की एकदम अलग, पारंपरिक परिभाषा पर जोर दिया था। उन्होंने संकेत दिया था कि भारत अपना रास्ता खुद बनाएगा, और महाशक्तियों को किसी और होड़ में पड़ने से बचना चाहिए। यह साउथ ब्लॉक यानी भारतीय विदेश विभाग के पुराने सुर की ही प्रतिध्वनि थी। लेकिन मोदी आज उस सुर में नहीं बोल सकते।

दूसरे हैं ध्रुव जयशंकर, जो अमेरिका के 'थिंक टैंक' ओआरएफ सेंटर के प्रमुख हैं। उनका कहना है कि भारत की रणनीतिक स्वायत्तता को लेकर यहूदी कानूनों के लिए की गई 'तालमुडिक' किस्म की बहसों का युग बीत गया है। आज आप उनसे परिभाषा के मामले में वैदिक की जगह यहूदी परंपरा से तर्क उठाने को लेकर झिकझिक कर सकते हैं। लेकिन संदेश बिलकुल साफ है। रणनीतिक नीतियां सर्वोच्च राष्ट्रहित से तय होती हैं, किसी भावुक याद या पुराने पाखंड से नहीं।

● कुमार विनोद

बहू को सास-ससुर के घर में रहने का हक

एक ऐतिहासिक फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि घरेलू हिंसा की शिकार महिला को सास-ससुर के मालिकाना हक वाली संपत्ति में रहने का अधिकार है। सुप्रीम कोर्ट ने बहू को रिहाइश का अधिकार दे दिया है। सुप्रीम कोर्ट ने अपने फैसले में कहा, किसी भी समाज का विकास महिलाओं के अधिकारों की रक्षा और उन्हें बढ़ावा देने की क्षमता पर निर्भर करता है। सुप्रीम कोर्ट ने अपने फैसले में कहा है कि घरेलू हिंसा की शिकार बहू को अपने सास-ससुर के साथ घर पर रहने का हक है। जस्टिस अशोक भूषण, आर सुभाष रेड्डी और मुकेश कुमार शाह की बेंच ने अपने ऐतिहासिक फैसले में कहा कि घरेलू हिंसा कानून के तहत बहू को अपने पति के माता-पिता के घर या संपत्ति में रहने का अधिकार है। कोर्ट ने अपने फैसले में कहा कि परिवार की साझा संपत्ति और घर में भी घरेलू हिंसा की शिकार पत्नी को हक मिलेगा। तीन जजों की बेंच ने शेयर्ड हाउसहोल्ड (साझा घर) की परिभाषा की व्याख्या करते हुए कहा- 'घरेलू हिंसा कानून के अनुच्छेद-2 (एस) के तहत साझा घर की परिभाषा सिर्फ यही नहीं है कि वह घर जो संयुक्त परिवार का हो जिसमें पति भी एक सदस्य है या जिसमें पीड़ित महिला के पति का हिस्सा है।'

बेंच ने कहा कि देश में घरेलू हिंसा से पीड़ित कुछ महिलाएं हर दिन किसी न किसी रूप में हिंसा का सामना करती हैं। ऐसी स्थिति में एक महिला अपने जीवनकाल में एक बेटी, एक बहन, एक पत्नी, एक मां, एक साथी या एक अकेली महिला के रूप में हिंसा और भेदभाव को खत्म करने के चक्र से खुद से समझौता करती है। कोर्ट ने कहा- 'एक महिला पति के रिश्तेदारों के घर पर भी रहने की मांग कर सकती है, जहां वह अपने घरेलू संबंधों के कारण कुछ समय के लिए रह चुकी हो।' 2018 के मुकाबले 2019 में महिलाओं के खिलाफ होने वाले अपराध में बढ़ोतरी दर्ज की गई। 2018 में महिलाओं के खिलाफ हुए 3,78,236 अपराधों के मुकाबले 2019 में 4,05,861 अपराध दर्ज किए गए। प्रति एक लाख महिलाओं पर अपराध की दर 62.14 दर्ज की गई, जो 2018 में 58.8 प्रतिशत थी। सबसे ज्यादा मामले (59,853) उप्र में दर्ज किए गए और असम में प्रति एक लाख महिलाओं पर सबसे ज्यादा अपराध की दर (177.8) दर्ज की गई।

2019 में भारत में बलात्कार के कुल 31,755 मामले दर्ज किए गए, यानी औसतन प्रतिदिन 87 मामले। सबसे ज्यादा मामले (5,997) राजस्थान में दर्ज किए गए। उप्र में 3,065 मामले और मप्र में 2,485 मामले दर्ज किए गए। प्रति एक लाख आबादी के हिसाब से बलात्कार के मामलों की दर में भी राजस्थान सबसे आगे है (15.9 प्रतिशत), लेकिन उसके बाद स्थान है केरल (11.1) और हरियाणा का (10.9)। महिलाओं के खिलाफ होने वाले अपराधों में 30.9 प्रतिशत मामलों के आरोपी पति या उसके रिश्तेदार जिम्मेदार पाए गए। कुल मामलों में 21.8 प्रतिशत मामले महिला की मर्यादा को भंग करने के इरादे से किए गए हमले के, 17.9 प्रतिशत अपहरण के और 7.9 प्रतिशत बलात्कार के थे। आंकड़ों में स्पष्ट नजर आ रहा है कि देश में दहेज से संबंधित अपराध अभी भी हो रहे हैं। उप्र में दहेज की वजह से उत्पीड़न के कुल 2,410 मामले दर्ज किए गए और बिहार में 1,210.2019 में पूरे देश में कुल 150 एसिड अटैक के मामले दर्ज किए, जिनमें से 42 उप्र में दर्ज किए गए और 36 पश्चिम बंगाल में। राजस्थान में सबसे ज्यादा दलित महिलाओं के साथ बलात्कार के मामले दर्ज किए गए (554), लेकिन उप्र और मप्र में भी स्थिति ज्यादा अलग नहीं है। उप्र में 537 मामले सामने आए और मप्र में 510। प्रति एक लाख आबादी पर दलित महिलाओं के साथ बलात्कार के मामलों की दर में 4.6 प्रतिशत के साथ केरल सबसे आगे है। उसके बाद 4.5 प्रतिशत के साथ मप्र और राजस्थान का स्थान है।

साल 2006 के फैसले में दो जजों की बेंच ने कहा था कि पीड़ित पत्नी सिर्फ एक साझा घर में निवास के अधिकार का दावा करने की हकदार है, जिसका मतलब सिर्फ पति के द्वारा किराए पर लिया घर या संयुक्त परिवार से जुड़ा घर होगा जिसमें पति एक सदस्य है। सुप्रीम कोर्ट का ताजा फैसला उस याचिका पर आया जिसमें एक महिला के ससुर ने हाईकोर्ट के फैसले को चुनौती दी थी। दिल्ली हाईकोर्ट ने बहू के पक्ष में फैसला सुनाया था और कहा था कि भले ही बहू तलाक की प्रक्रिया में हो उसे ससुराल में निवास का अधिकार है। वहीं ससुर ने अपनी दलील में कहा था कि बेटे का घर में कोई हिस्सा नहीं है क्योंकि उन्होंने खुद संपत्ति अर्जित की है।

● ज्योत्सना अनूप यादव

शहर हो या गांव, महिलाओं पर ही है घर का सारा बोझ

भारत में लोग समय कैसे बिताते हैं इस विषय पर सरकार ने पहली बार एक सर्वेक्षण कराया है। सर्वे में यह साबित हो गया है कि शहर हो या गांव, महिलाएं आज भी हर जगह चारदीवारी के अंदर ही सीमित हैं। दिन के 24 घंटों में पुरुष और महिलाएं दोनों सबसे ज्यादा समय अपना ख्याल रखने में बिताते हैं। पुरुष उसके बाद सबसे ज्यादा वक्त रोजगार और उससे जुड़ी गतिविधियों में बिताते हैं और महिलाएं उसके बाद सबसे ज्यादा वक्त बिना किसी वेतन के घर के काम करने में बिताती हैं। सर्वे में पूरे देश में सिर्फ 38.2 प्रतिशत लोगों को रोजगार में व्यस्त पाया गया। ग्रामीण इलाकों में यह दर 37.9 प्रतिशत है, जिसमें से पुरुषों की भागीदारी 56.1 प्रतिशत है और महिलाओं की 19.2 प्रतिशत। शहरी इलाकों में दर 38.9 प्रतिशत है, जिसमें पुरुषों की भागीदारी 59.8 प्रतिशत है और महिलाओं की भागीदारी 16.7 प्रतिशत है। अपने इस्तेमाल के लिए सामान के उत्पादन में देश में सिर्फ 17.1 प्रतिशत लोग लगे हुए हैं। ग्रामीण इलाकों में यह दर 22 प्रतिशत है, जिसमें से पुरुषों की भागीदारी 19.1 प्रतिशत है और महिलाओं की 25 प्रतिशत। शहरी इलाकों में दर सिर्फ 5.8 प्रतिशत है, जिसमें पुरुषों की भागीदारी 3.4 प्रतिशत है और महिलाओं की भागीदारी 8.3 प्रतिशत है। बिना किसी वेतन के दूसरों की देख-भाल करने में भी महिलाएं पुरुषों से कहीं ज्यादा आगे हैं। ग्रामीण इलाकों में यह सिर्फ 14.4 प्रतिशत पुरुष करते हैं जबकि महिलाओं का प्रतिशत 28.2 है। शहरी इलाकों में इसमें पुरुषों की भागीदारी 13.2 प्रतिशत है और महिलाओं की 26.3 प्रतिशत। वहीं 91.3 प्रतिशत भारतीय पूजा-पाठ, लोगों से मिलने और सामुदायिक गतिविधियों में शामिल होते हैं। इसमें ग्रामीण और शहरी दोनों ही इलाकों में 90 प्रतिशत से ज्यादा महिलाओं और पुरुषों दोनों की भागीदारी है।

अशांति से पार लगाती है गीता

यदा-यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मनं सृजाम्यहम॥

जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है तब-तब ही मैं अपने स्वरूप को रचता हूं अर्थात् प्रकट होता हूं। भगवान विष्णु किसी न किसी रूप में अवतरित होकर पापियों का नाश कर धर्म की पुनः स्थापना करते हैं। शास्त्रों के अनुसार भगवान विष्णु ने 23 अवतार धारण किए जिसमें सबसे महत्वपूर्ण अवतार श्रीकृष्ण का है।

लगभग 5000 वर्ष पूर्व जब श्रीकृष्ण ने यह दिव्य उपदेश अर्जुन को महाभारत युद्ध के समय कुरुक्षेत्र में दिया, तब से आज तक हजारों लाखों विद्वानों, तपस्वियों, ऋषि-मुनियों और शोध कर्म करने वालों ने गीता की व्याख्या की। गीता अशांति के समुद्र में शांति का दीप है। ज्ञान से हम आत्मा और भक्ति से परमात्मा को जान सकते हैं किंतु कर्म से आत्मा और परमात्मा दोनों को ही जाना जा सकता है। कर्म के बिना अज्ञान अधूरा और भक्ति अपूर्ण है। मनुष्य कर्म से ही सुख, दुख, भय एवं मोक्ष प्राप्त करता है।

श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा, 'हे अर्जुन कर्म करना प्रत्येक मानव का धर्म है क्योंकि मानव का जीवन कर्म पर ही आधारित है बिना कर्म किए कोई भी मानव मुक्ति अर्थात् आवागमन से छुटकारा नहीं पा सकता और न ही कर्म को त्याग कर उसे पूर्णता यानी सिद्धि की प्राप्ति हो सकती है। श्रीकृष्ण ने गीता में कर्म को व्यक्ति का धर्म ही नहीं माना है बल्कि इसे योग भी कहा है। यानी भगवत प्राप्ति के लिए कर्म एक साधना के समान है और साधना ही योग है। गीता में कर्मयोग, ज्ञान योग और भक्ति योग का ऐसा समन्वय है कि मानव ऐसी जीवन-पद्धति की राह पकड़ता है जिसका पालन करता हुआ वह एक भय मुक्त और शांति पूर्वक जीवन व्यतीत करते हुए अपने उद्देश्यों की पूर्ति सहज ही कर सकता है।'

मानव इस संसार में पूरा जीवन समस्याओं से घिरा रहता है। समस्याओं में सबसे पहले है मृत्यु का डर, जो उसे सताता रहता है। कोई भी इस संसार में मृत्यु नहीं चाहता। गीता मानव को इस डर से मुक्त करती है। गीता कहती है कि मृत्यु है ही नहीं, तो रोना-धोना किसलिए? यह तो एक वस्त्र परिवर्तन है। जिस तरह मानव पुराने वस्त्र त्यागकर नए वस्त्र धारण करता है उसी प्रकार आत्मा जीर्ण-शीर्ण काया को त्याग कर नया शरीर धारण कर लेती है।

गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं कि ऐसा नहीं कि पहले मैं नहीं था या तू नहीं था या ये राजा लोग (महाभारत युद्ध में उपस्थित) नहीं थे। ऐसा भी नहीं है कि इसके बाद हम सब नहीं होंगे। मृत्यु तो हमारी उपज मात्र है। मानव की दूसरी समस्या है चिंता। चिंता मुक्त जीने की कामना प्रत्येक मानव करता है। इस संसार में कोई भी मानव अशांत नहीं रहना चाहता, मगर अशांति मानव को आजीवन अपने शिकंजे में रखती है। कभी कारोबार, कभी पढ़ाई, कभी नौकरी की चिंता तो कभी बच्चों की चिंता। श्रीकृष्ण इस समस्या की महौषधि मानव को सौंपते हुए कहते हैं कि परिणाम की चिंता क्यों करते हो? क्या यह सब तुम्हारे हाथ में है? तुम्हारा अधिकार तो कर्म पर है बस उसे करो। कर्म फल को अपने अनुकूल बनाने का (व्यर्थ) प्रयास मत करो न ही स्वयं को कर्म के साथ बांधो।

मानव की तीसरी समस्या है आलस्य। कर्म न करने वाला मानव हमेशा चिंताग्रस्त रहेगा। श्रीकृष्ण कहते हैं निठल्ले मत बैठो। अपने नित्य कर्म करो। कर्म, अकर्म से श्रेष्ठ है। कर्म नहीं करोगे तो शरीर यात्रा भी सिद्ध नहीं होगी। अगर आज की बात करें तो गीता के ज्ञान से हम समाज में फैली कुरीतियों, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, अविश्वास, भय आदि से मुक्ति पा सकते हैं। गीता का मूल स्वर भी मोह से मुक्ति और कर्म से युक्ति ही है। अर्जुन से श्रीकृष्ण कहते हैं कि कर्म करना प्रत्येक मानव का धर्म है। सब जगत मेरे द्वारा चलायमान है। मैं ही कर्त्ता और अकर्त्ता हूं। सामने दिखने वाले लोग तो कठपुतलियां मात्र हैं। कर्म को ही धर्म मानने का उपदेश देते हुए श्रीकृष्ण ने अर्जुन से युद्ध करने को कहा। विराट रूप देखने के उपरांत अर्जुन ने श्रीकृष्ण द्वारा दर्शाए मार्ग पर चलकर क्षत्रिय धर्म का पालन किया और कौरवों पर विजय प्राप्त की।

भगवत गीता में कहा गया है-
कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम।
अनार्यजुष्टस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन।

श्रीकृष्ण ही परम ईश्वर भगवान हैं, इसीलिए श्रीकृष्ण को संपूर्ण गीता में भगवान ही कहा गया है। भगवान परमसत्य की पराकाष्ठा हैं। परमसत्य का बोध ज्ञान की तीन अवस्थाओं में होता है- ब्रह्मा या निर्विशेष सर्वव्यापी आत्मा, परमात्मा या भगवान का अंतर्यामी रूप जो समस्त जीवों के हृदय में है तथा भगवान या भगवान श्रीकृष्ण। संस्कृत शब्द भगवान की व्याख्या व्यासदेव के पिता पराशर मुनि ने की है। समस्त धन, शक्ति, यश, सौंदर्य, ज्ञान तथा त्याग से युक्त परम पुरुष भगवान कहलाता है। ऐसे अनेक व्यक्ति हैं जो अत्यंत धनी हैं, अत्यंत शक्तिमान हैं, अत्यंत सुंदर हैं और अत्यंत विख्यात, विद्वान तथा विरक्त भी हैं किंतु कोई साधिकार यह नहीं कह सकता कि उसके पास सारा धन, शक्ति आदि है। एकमात्र कृष्ण ही ऐसा दावा कर सकते हैं क्योंकि वह भगवान हैं। ब्रह्म, शिव या नारायण सहित कोई भी जीव कृष्ण के समान पूर्ण ऐश्वर्यवान नहीं है। अतः ब्रह्मासंहिता में स्वयं ब्रह्माजी का निर्णय है कि श्रीकृष्ण स्वयं भगवान हैं। न तो कोई उनके तुल्य है न उनसे बढ़कर है। वे आदि स्वामी या भगवान हैं, गोविंद रूप में जाने जाते हैं और समस्त कारणों के परम कारण हैं।

● **ओम**

इकतीस दिन का महीना

वह सुबह से ही मंदिर के अहाते में आकर बड़ी देर से बेहद उदास होकर बैठी थी। लगता था कि वह भूखी भी है। पुजारी जी ने उसे देखते ही पूछा–

माई, लगता है आज इकतीख तारीख है।

हां, पंडित जी।

तो तू, उदास क्यों होती है, आज का दिन यहीं गुजार और यहीं खाना खा। इतना सुनते ही वह अतीत में पहुंच गई।

पति के निधन के बाद मेहनत–मजदूरी करके उस औरत ने अपने दोनों बेटों को पाल–पोसकर, पढ़ा–लिखाकर इस काबिल बनाया था, कि वे दोनों सरकारी नौकरी में और एक अच्छी पत्नी को पा सकें।

पर शादी के बाद दोनों भाइयों में नहीं बनी तो उन्होंने घर–मकान का बंटवारा कर लिया, पर कोई भी बेटा मां की पूरी जिम्मेदारी लेने तैयार नहीं था।

अंत में लाचार होकर दोनों भाइयों ने पंद्रह–पंद्रह दिन के लिए मां की जिम्मेदारी ले ली। पर विडंबना कि जब महीना इकत्तीस दिन का होता था तो मां को एक दिन मंदिर में जाकर गुजारा करना पड़ता था।

माई, कहां खो गई? ये भोग तो खा और आराम कर। पुजारी की आवाज सुनते ही वह वर्तमान में लौट आई और आंसू पौंछकर भोग लेकर खाने लगी।

– प्रो.शरद नारायण खरे

अर्धांगिनी

रोशनलाल की हालत दिन–प्रतिदिन बिगड़ती ही जा रही थी। क्योंकि उनकी दोनों किडनी बेकार हो चुकी थी। डॉक्टरों के अनुसार अब बिना किडनी ट्रांसप्लांट के कोई रास्ता नहीं है। क्योंकि रोशनलाल एक मध्यमवर्गीय परिवार से था, जिसकी आर्थिक स्थिति भी बहुत अच्छी नहीं थी।

वैसे भी लोग अपनों के लिए ऐसी जहमत नहीं उठाते फिर रोशनलाल के लिए इतना बड़ा कदम कौन उठाता?

ऐसे में रश्मि ने बड़ा फैसला किया और जैसे–तैसे भाइयों की बदौलत पैसे का इंतजाम किया और डॉक्टर को अपने फैसले से अवगत करा दिया।

लेकिन जब उसने रोशनलाल को यह सब अवगत कराया तो वह परेशान हो गया। आखिर क्यों अपनी जान देने पर तुली हो, जरूरी तो नहीं कि तुम एक किडनी दे दो और मैं ठीक ही हो जाऊं।

मैं तो मर ही रहा हूं मगर तुम भी।

रश्मि ने उसे समझाया– हौंसला रखो और सब कुछ भगवान पर छोड़ दो। जीना–मरना ऊपर वाले की व्यवस्था है। कर्म करना हमारा काम है। ईश्वर ने दो किडनी शायद इसीलिए दी है कि वह किसी की जान बचा सके। फिर आप तो मेरा सुहाग हो। अपने जीते जी मैं भला आपको मौत के मुंह में जाते हुए कैसे देख सकती हूं?

आखिर मैं आपकी पत्नी हूं। शायद इसीलिए पत्नी को अर्धांगिनी कहा गया है। इसलिए आप शांत रहिए, हिम्मत रखिए। सब ठीक हो जाएगा, भगवान के घर देर है अंधेर नहीं। भगवान सबका भला करता है, हमारा भी करेगा।

वैसे भी हमें आपकी जरूरत है, बच्चों को आपकी जरूरत है। इसलिए जो हो रहा है होने दीजिए।

रश्मि की जिद के आगे रोशनलाल निरूत्तर हो गए। उनकी आंखें भर आईं।

– सुधीर श्रीवास्तव

बाधाओं को मीत बना ले

उपवन की शोभा बढ़ती जब,
खिलते पाटल और लिली हैं।
स्नेह–भाव पाकर अपनों का,
अधरों पर मुस्कान खिली है।
प्रेम लुटाया करते हैं जो,
भेदभाव से ऊपर उठकर।
गिरि–शीश झुकाया करते वे,
जो बढ़ते जाते गिर–गिरकर।
बाधाओं को मीत बना ले,
वह साधक है, बहुत बली है।
स्नेह–भाव पाकर अपनों का,
अधरों पर मुस्कान खिली है।
कल से सीख–समझ लेते हैं,
बीत गया जो न उस पर रोते।
वर्तमान में श्रम सीकर से,
स्वर्णिम कल के सपने बोते।
सदा सुवासित श्रम श्वेद से,
खलिहान, खेत, द्वार, गली है।
स्नेह भाव पाकर अपनों का,
अधरों पर मुस्कान खिली है।

– प्रमोद दीक्षित मलय

क्रिकेट को नहीं रही दर्शकों की जरूरत!

यूएई में आईपीएल चल रहा है। हर दिन मैच हो रहे हैं और भरपूर रोमांच देखने को मिल रहा है। खिलाड़ियों के हावभाव से कहीं नजर नहीं आ रहा कि उन्हें दर्शकों की कमी खल रही हो। विकेट लेने के बाद का जश्न हो या फिर रन बनाने की खुशी, इसे बांटने के लिए डगआउट में बैठे साथी ही हैं। लगता है कि खिलाड़ी इस नए माहौल में अच्छी तरह से ढल चुके हैं। वे खेल का पूरा मजा ले रहे हैं। वहीं टीवी पर विश्वभर के दर्शक इसका मजा ले रहे हैं। इससे सवाल उठने लगे हैं कि क्या बिना दर्शक के भी क्रिकेट हो सकता है।

क्रिकेट प्रेमियों को 1996 क्रिकेट विश्वकप का वह सेमीफाइनल मुकाबला याद होगा, जिसमें श्रीलंका के खिलाफ भारतीय पारी ताश के पत्तों की तरह ढह गई थी। भारत की जीत का सपना लिए कोलकाता के ऐतिहासिक ईडन गार्डन पहुंचे हजारों दर्शक टीम इंडिया को हारते नहीं देख पाए और उन्होंने वहीं स्टेडियम में हंगामा शुरू कर दिया। स्थिति इस कदर बिगड़ी कि मैच ही रोक देना पड़ा। सोचिए कि अगर मुकाबले में दर्शक ही नहीं होते तो क्या ईडन गार्डन के इतिहास में यह काला अध्याय जुड़ता?

यह वाकया बताने के लिए काफी है कि दर्शक और मैदान पर चल रहे खेल में क्या रिश्ता है। टीवी सेट के सामने बैठे दर्शकों का मुकाबले से उस तरह का जुड़ाव नहीं हो पाता, जैसा स्टैंड में बैठे दर्शकों का। सामने से मैच देख रहे लोग कहीं ज्यादा भावनात्मक रूप से जुड़ जाते हैं। हर रोमांचक मोड़ पर वह अपनी भावनाएं खुलकर जाहिर करते हैं। अपने लिए ताली बजा रहे दर्शकों को खिलाड़ी भी करीब महसूस करने लगते हैं और कभी-कभी इन चाहने वालों की मांग के अनुसार खेल को ही बदल लेते हैं। कुछ महीनों पहले तक बिना दर्शकों के किसी भी खेल की कल्पना किसी ने भी नहीं की होगी। लेकिन अब सब बदल चुका है। आज टीमें सन्नाटा पसरे स्टेडियमों में एक-दूसरे से भिड़ रही हैं। वहां न तो उनके लिए कोई तालियां बजाने वाला है और न हूटिंग करने वाला।

लॉकडाउन के बाद खेल को दोबारा शुरू करने की पहली कुछ शर्तों में दर्शकों को स्टेडियमों से दूर रखना भी शामिल रहा। थोड़ा अटपटा था, लेकिन समय की मांग को देखते हुए यह प्रयोग करने को सभी राजी हो गए। हालांकि बिना दर्शकों के खेल की सफलता को लेकर सभी ने संदेह जताया। हर किसी को यही आशंका थी कि प्रयोग सफल नहीं रहेगा और कुछ ही दिनों में दर्शकों को स्टेडियम में लाने के लिए कोई और कदम उठाना पड़ेगा। दर्शकों के बगैर मुकाबले की बात सुनकर महान सचिन तेंदुलकर ने भी निराशा जाहिर की थी। उन्होंने कुछ ही दिनों पहले कहा था, 'दर्शक किसी भी खेल का अहम अंग होते हैं। उनका उत्साह बढ़ाना, आपके पक्ष में या खिलाफ में उठने वाला शोर बेहद जरूरी है। ऐसे कई मौके आते हैं, जब दर्शकों की मांग के अनुसार खेलते हैं खिलाड़ी। अगर मैं अच्छा शॉट लगाता हूं और दर्शक उसकी सराहना करते हैं तो ऊर्जा मिलती है। इसी तरह से एक गेंदबाज स्पेल करता है और दर्शक उस पर तालियां बजाते हैं तो इससे बल्लेबाज पर एक तरह से दबाव बनता है और उसे उस प्रेशर से बाहर निकलना होता है।' ऐसे ही कई और हस्तियों ने कहा कि दर्शकों के बिना खेल से रोमांच खत्म हो जाएगा और खिलाड़ी अपना सर्वश्रेष्ठ नहीं दे पाएंगे। हालांकि आईपीएल का अब तक का सफर देखने के बाद लगता है कि खेल जगत इस बात से आगे बढ़ चुका है। खाली स्टैंड्स को लेकर अब कोई बात नहीं हो रही।

भारतीय क्रिकेट टीम के कोच रवि शास्त्री इस पूरे परिदृश्य को समझाते हुए कहते हैं, 'स्टैंड में दर्शकों का नहीं होना कुछ अलग है। शुरुआत में यह नर्वस करने वाली बात रही। लेकिन जैसा हर चीज के साथ होता है, गुजरते समय के साथ आप इसके भी आदि हो गए। जब आपने शुरुआत के एक या दो मैच खेले, तब मानसिक रूप से यह कष्ट देने वाला रहा। लेकिन इसके बाद आप इसमें ढलने लगे। आपने महसूस किया कि इसके अलावा और भी चीजें हैं जो इससे ज्यादा महत्वपूर्ण हैं। यह सोच आपके भीतर पैदा हो गई, जिसके बाद दर्शकों की गैरमौजूदगी जैसी बातें आपके दिमाग से बाहर निकलने लगीं।'

सबसे अधिक चर्चा भारतीय क्रिकेटरों और खासकर विराट कोहली को लेकर हुई। कहा गया कि दर्शकों के बगैर भारतीय प्लेयर्स को अपना सर्वश्रेष्ठ देने में दिक्कत होगी। दर्शक तो कोहली की आधी ताकत हैं। अगर वे नहीं रहेंगे तो कोहली के भीतर जोश कौन भरेगा? और अगर कोहली में जोश नहीं होगा तो वह खेलेंगे कैसे? जब शुरुआत की कुछेक पारियों में कोहली का बैट नहीं गरजा तो एकबारगी लगा कि यह कोरोनाकाल कई प्लेयर्स के कैरियर को डुबो देगा, लेकिन जैसा रवि शास्त्री ने कहा, ठीक वैसा ही हुआ। गुजरते समय के साथ कोहली ने भी दर्शकों के बगैर खेलना सीख लिया।

● आशीष नेमा

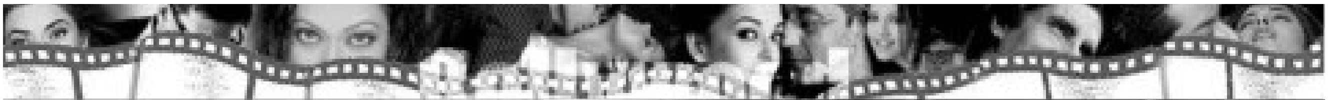

अक्षय ने रवीना से की थी सगाई

किसी कारण से अलग हो गए थे दोनों

अपनी एक्टिंग, खूबसूरती और अदाओं से एक्ट्रेस रवीना टंडन ने फिल्म इंडस्ट्री में कम समय में एक खास मुकाम बना लिया था। उनका जन्म 26 अक्टूबर, 1974 को मुंबई में हुआ था। रवीना ने 1991 में सलमान खान के साथ फिल्म पत्थर के फूल से बॉलीवुड में डेब्यू किया था, लेकिन 1994 में आई फिल्म मोहरा से उन्हें पहचान मिली। इंडस्ट्री में रवीना को मस्त-मस्त गर्ल कहा जाता है। अक्षय कुमार की फिल्म मोहरा के गाने तू चीज बड़ी है मस्त-मस्त से उन्हें यह नाम मिला था।

1999 में स्टारडस्ट को दिए इंटरव्यू में रवीना ने यह स्वीकार किया था कि अक्षय ने उन्हें शादी के लिए प्रपोज किया था। अक्षय और उन्होंने मंदिर में सगाई भी की थी। रवीना के मुताबिक, अक्षय ने इस बात को नहीं स्वीकारा क्योंकि उन्हें अपने करियर और फीमेल फैन्स को खोने का डर था। रेखा और फिर शिल्पा शेट्टी के साथ अफेयर चलने के कारण रवीना अक्षय कुमार से अलग हो गईं। अक्षय से रिश्ता समाप्त करने के बाद रवीना ने घर बसाने का फैसला किया। रवीना ने 22 फरवरी 2004 को फिल्ममेकर अनिल थडानी से शादी कर ली। रवीना की यह पहली लेकिन अनिल की यह दूसरी शादी है।

शाहरुख ने पहली बार फोन कर गौरी से कहा-

'मुझे अपने भाई जैसा समझो'

शाहरुख खान और गौरी की रियल लव स्टोरी फिल्मी कहानी जैसी है। दोनों एक कॉमन फ्रेंड की पार्टी में पहली बार मिले थे। गौरी को देखते ही शाहरुख उनसे इम्प्रेस हो गए तो उन्होंने फौरन गौरी से डांस करने को पूछा। इस पर गौरी ने चालाकी भरा जवाब दिया और कहा कि वे अपने बॉयफ्रेंड का वेट कर रही हैं। इसके बाद शाहरुख ने गौरी के बॉयफ्रेंड के बारे में तहकीकात की। तहकीकात के बाद शाहरुख को पता चला कि गौरी अपने भाई का वेट कर रही थीं। पहली मुलाकात में उन्होंने झूठ बोल दिया था। इसके बाद शाहरुख को अपना रास्ता आसान लगा क्योंकि

गौरी का कोई बॉयफ्रेंड नहीं है तो उन्होंने किसी तरह से उनका नंबर हासिल कर लिया। नंबर हासिल करने के बाद फिर क्या था? शाहरुख खान ने गौरी को फोन किया। गौरी ने पूछा, 'आप कौन?' तो शाहरुख खान ने शरारती अंदाज में बोला, मुझे अपने भाई जैसा समझो। शाहरुख के इस तरह से अपने में इंटरेस्ट जताने के तरीके से गौरी इम्प्रेस हो गईं।

इंस्टाग्राम पर 50 मिलियन फॉलोअर्स होने पर

आलिया ने फैंस को कहा- शुक्रिया

बॉलीवुड एक्ट्रेस आलिया भट्ट ने अपनी एक अचिवमेंट को अपने फैंस के साथ शेयर किया है। उनके इंस्टाग्राम अकाउंट पर 50 मिलियन फॉलोअर्स हो गए हैं। आलिया ने अपने इंस्टाग्राम अकाउंट से पोस्ट कर इस उपलब्धि पर खुशी जाहिर की है। उन्होंने लिखा है- आज का दिन सराहना का दिन है.. मेरे परिवार को.. मेरे फैंस को धन्यवाद.. आपने आज मुझे 50 मिलियन का प्यार दिया है.. आई लव यू ऑल द स्टार्स एंड बियांड। भट्ट ने आगे लिखा है- पिछले दो महीनों में मैंने जो कुछ सीखा है, उसे इस क्षण मैं शेयर करना चाहूंगी.. सोशल मीडिया हमें जोड़ता है.. यह हमें उत्साहित

करता है और हां यह हमारा मनोरंजन भी करता है.. लेकिन हम यह नहीं हैं। जब मेरे 5 या 15 या 50 हजार फॉलोअर्स थे, तब भी मैं उतना ही खुश थी, जितना मैं आज खुश और अपने फैंस की आभारी हूं। आलिया ने आगे लिखा कि, मैं वास्तव में विश्वास करती हूं कि हमारा जीवन उन रिश्तों से बनता है जैसे हम उन लोगों के साथ पेश आते हैं।

कल अर्बन नक्सली प्रोफेसर धूर्तानंद ने ईवीएम के बारे में एक लेख लिखकर भारत के लोकतंत्र पर मंडराते हुए खतरे से लोगों को सावधान किया। इस आलेख को पढ़कर मेरे खिलाफ लोग सड़कों पर आ गए। मुझे गंदी-गंदी गलियां देने लगे।

ईवीएम की आत्मकथा

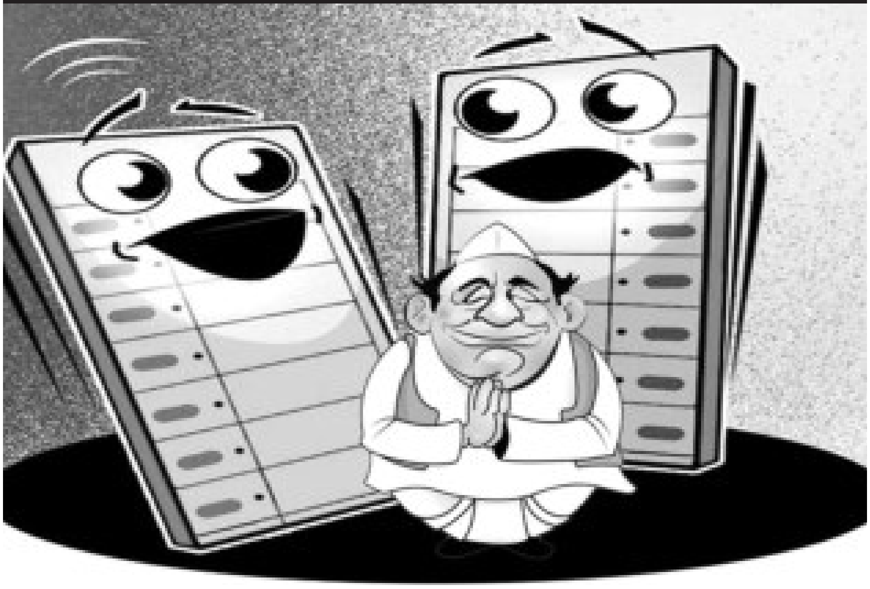

मैं ईवीएम अर्थात् इलेक्ट्रानिक वोटिंग मशीन हूं। मेरा भरापूरा परिवार है। चुनाव आयोग मेरे पिता हैं और सभी राजनीतिक दल मेरे देवर। विजय-पराजय नामक मेरी दो पुत्रियां हैं। भरापूरा परिवार होने के बावजूद मैं आजकल बहुत दुखी और हताश हूं। राजनीतिक दल मुझे निरंतर बदनाम कर रहे हैं। मेरे चरित्र पर लांछन लगाया जा रहा है। मेरे चरित्र को लेकर विरोधी दल के नेता और देश के शांतिदूत सड़कों पर उतर आए हैं। कह रहे हैं कि ईवीएम के कारण लोकतंत्र खतरे में पड़ गया है, निष्पक्ष चुनाव नहीं हो रहे हैं, बटन कहीं दबाओ, वोट सत्ताधारी दल को ही जाता है। कोई नई बात नहीं है।

अक्सर भारत का लोकतंत्र खतरे में पड़ जाता है। यह लोकतंत्र इतना नाजुक, छुईमुई और कोमलांग है कि जरा-सी तेज हवा चली नहीं कि यह खतरे में पड़ा। सत्ताधारी दल का कोई मंत्री जोर से छींक देता है तो इस नाजुक लोकतंत्र पर ग्यारह हजार वोल्ट का खतरा उत्पन्न हो जाता है, किसी मंत्री के खांस देने मात्र से लोकतंत्र का नाड़ा ढीला हो जाता है। इस लोकतंत्र को बचाने के लिए लोग बसों में आग लगा रहे हैं, सरकारी कार्यालयों और इमारतों में तोड़फोड़ कर रहे हैं, बीमारों को अस्पताल जाने से रोक रहे हैं। लोकतंत्र प्रहरियों के एक हाथ में संविधान और दूसरे हाथ में पेट्रोल बम, बंदूक व पत्थर हैं। कुछ दिन पहले किसी युवक ने फेसबुक पर ईवीएम के पक्ष में अपने विचार व्यक्त किए थे। इसी बात को लेकर लोकतंत्र समर्थकों की भीड़ ने फेसबुक पोस्ट के बहाने दो पुलिस स्टेशनों को आग के हवाले कर दिया, 300 से अधिक गाड़ियों में आग लगा दी, साठ से अधिक पुलिसकर्मियों को घायल कर दिया। फेसबुक पोस्ट करने वाला युवक स्थानीय विधायक का भतीजा था। इसलिए लोकतंत्र के रक्षकों ने विधायक के घर को भी जला दिया। ये लोग लोकतंत्र के जागरूक प्रहरी हैं, संविधान की रक्षा करने के लिए ही ये लोग अभी तक इस धरती पर जीवित हैं अन्यथा ये कब का इस धरा धाम को छोड़ चुके होते। ये लोग लोकतंत्र की रक्षा करने के लिए हमेशा आकुल-व्याकुल रहते हैं। जब तक ऐसे लोग देश में जीवित हैं तब तक लोकतंत्र को कोई खतरा नहीं हो सकता है।

कल अर्बन नक्सली प्रोफेसर धूर्तानंद ने ईवीएम के बारे में एक लेख लिखकर भारत के लोकतंत्र पर मंडराते हुए खतरे से लोगों को सावधान किया। इस आलेख को पढ़कर मेरे खिलाफ लोग सड़कों पर आ गए। मुझे गंदी-गंदी गलियां देने लगे। मुसीबत की मारी मैं अपना दुख किससे कहूं- दुखवा का से कहूं मोरी सजनी। दुख के कारण मेरे नयना सावन-भादो बन गए हैं। मैं अपने भाग्य को कोस रही हूं कि क्यों मैंने ईवीएम तन पाया। झूठा सब संसार है, कोऊ न अपना मित-अब कोई मेरे काम नहीं आ रहा, न सत्तापक्ष, न विपक्ष। तनाव से मेरा माथा फटा जा रहा है। अब तो रामजी का ही सहारा है कि वे मेरी लाज को सरेआम नीलाम होने से बचाएंगे। यदि विपक्षी दल पराजित हो जाते हैं तो सार्वजनिक रूप से मेरी इज्जत का तमाशा बनाते हैं, मेरा चरित्र हनन करते हैं, लेकिन विजयी होने पर मेरे सम्मान में एक शब्द भी नहीं बोलते। नेतागण मुझ पर पक्षपात करने का आरोप लगाते हैं।

कहते हैं कि कलमुंही, करमजली! तुमने सर्वहारा पार्टी के साथ मुंह काला कर मुझे परास्त कर दिया है जबकि मैं गंगाजल लेकर शपथ खा सकती हूं कि मैंने कोई पाप नहीं किया है, मैं सीता की तरह पवित्र हूं। हर चुनाव के बाद मुझे अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है। अग्नि परीक्षा देते-देते मैं तो थक चुकी हूं- अब मैं नाच्यो बहुत गोपाल। मेरा दामन पाक साफ है, मेरा चरित्र दुग्धधवल है। मैं सीता की तरह अग्निपरीक्षा दे सकती हूं लेकिन पातालीय राजनीति में कोई राम नहीं है जिसके सम्मुख मैं अग्निपरीक्षा दे सकूं। फिर चुनाव परिणाम आने वाला है। मेरे दिल की धड़कन बढ़ गई है। परास्त होने पर विपक्षी दल कहेंगे कि तुमने सर्वहारा पार्टी के साथ सेटिंग करके मुझे पराजित करवा दिया वर्ना मेरी पार्टी को 700 सीटें आने वाली थीं। मेरे साथ ही मेरे जनक चुनाव आयोग को भी खूब गालियां दी जाएंगी। मैंने पूर्व जन्म में जरूर कोई पाप किया होगा कि मैं ईवीएम के रूप में पैदा हुई। हाय मेरा दुर्भाग्य!

अब तो मेरी रक्षा ईश्वर ही करेगा- लाज रखो गिरिधारी, अब तो एक भरोसा तिहारी। इस वसुधा पर मुझ जैसी अभागी कोई न होगी। मैं बिना कोई पाप किए ही लोगों की गाली सुनने के लिए अभिशप्त हूं। जब पार्टियां विजयी होती हैं तो कोई मुझे धन्यवाद के दो मीठे बोल भी नहीं बोलता, लेकिन पराजय का ठीकरा सभी मुझ पर फोड़ते हैं। कमजोर की बीवी न हुई, सबकी भौजाई हो गई। हाय दइया! अब मैं कहां जाऊं! मेरे लिए तो मेरे जनक ने कोई तनाव मुक्ति केंद्र भी स्थापित नहीं किया है। कलियुग में कितना भी जप, तप कर लो, कोई साधु नहीं मानता। मैंने अपने जीवन की चादर को सफेद रखा है, कोई दाग नहीं है, कोई पाखंड का राग नहीं, फिर भी लोग मेरे मुख पर बदनामी की कालिख लगाते ही रहते हैं। अब तो लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला की तरह मेरा ईवीएम जीवन भी मेरे लिए पहाड़ हो गया है- दिन नहीं चैन, रैन नहीं निंदिया। पेट में भूख नहीं, आंखों में नींद नहीं। कैसा अभिशप्त जीवन है! सभी लोग मुझे शंका की निगाह से देखते हैं। मेरे अपने भी अब मेरे चरित्र पर शंका करने लगे हैं। लगता है कि सचमुच कलियुग आ गया है-

यह कलियुग आयो अबै, साधु न मानै कोय।
कामी, क्रोधी मसखरा, तिनकी पूजा होय।।

● **प्रमोद दीक्षित 'मलय'**

विश्वसनीय खबरों के लिए पढ़ते रहिए

In Pursuit of Truth

पाक्षिक

अक्स

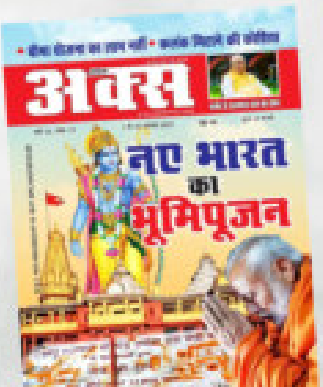

E-Magazine पढ़ने और PDF डाउनलोड करने के लिए हमारी वेबसाइट पर जाएं

www.akshnews.com

वार्षिक सदस्यता के लिए संपर्क करें, 150, जोन-1, एम.पी.नगर भोपाल
फोन:0755-4017788,2575777

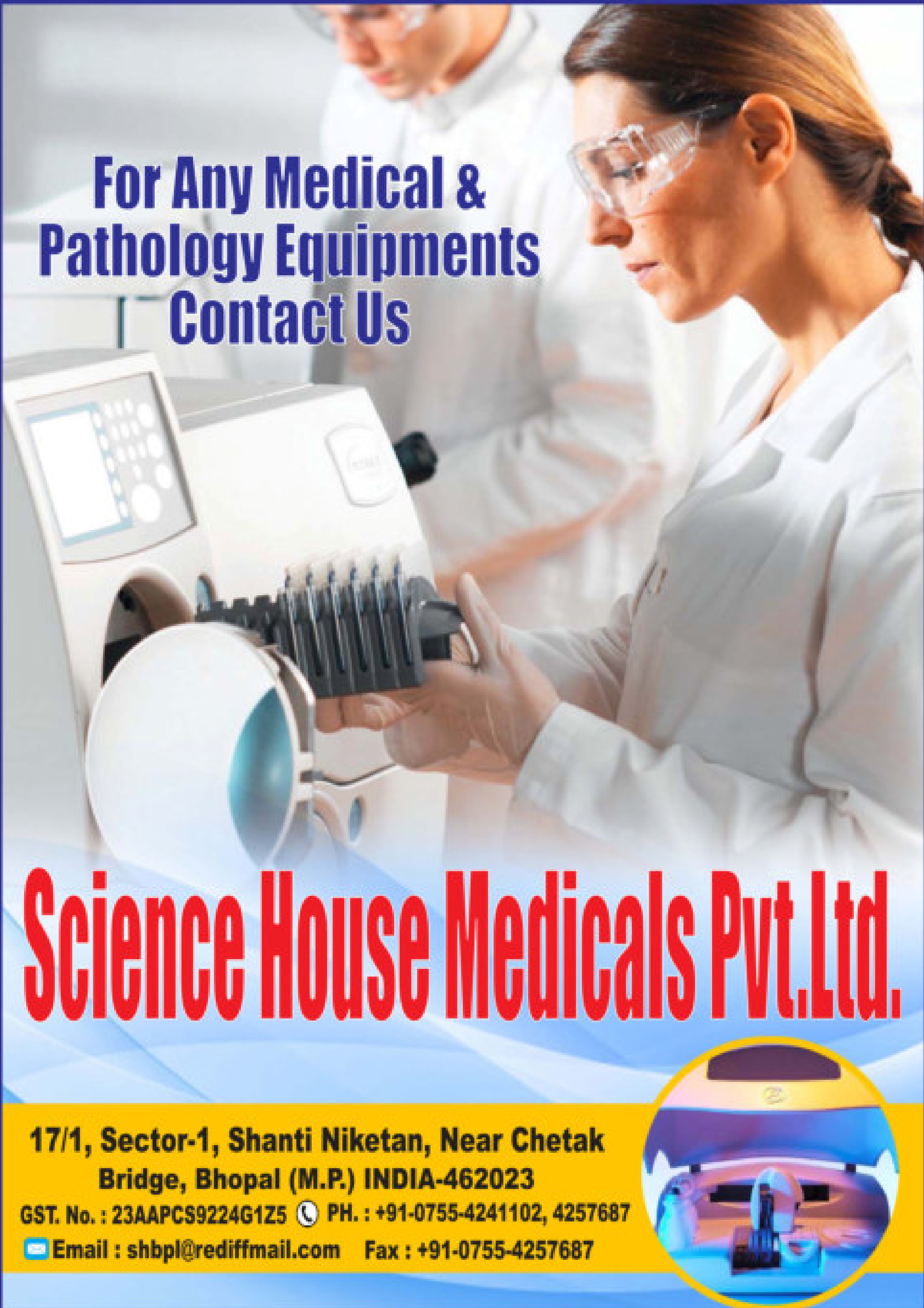
For Any Medical &
Pathology Equipments
Contact Us
Science House Medicals Pvt.Ltd.
17/1, Sector-1, Shanti Niketan, Near Chetak
Bridge, Bhopal (M.P.) INDIA-462023
GST. No. : 23AAPCS9224G1Z5
PH. : +91-0755-4241102, 4257687
Email : shbpl@rediffmail.com
Fax : +91-0755-4257687